# अध्याय एक

# समकालीन कहानी : दशा और दिशा

# अध्याय एक
# समकालीन कहानी : दशा और दिशा

कहानी आधुनिक युग की सबसे लोकप्रिय और सशक्त साहित्यिक विधा है। यह जीवन से सर्वाधिक घनिष्ठ संबन्ध रखनेवाली साहित्यिक विधा है। हिन्दी की प्रारंभिक कहानियों में विस्मय से भरी ऐयारी, तिलस्मी प्रवृत्तियाँ प्रमुख रही। आगे भारतेन्दु काल की कहानियों में नैतिक संदेशों, धार्मिक उपदेशों, आदर्श निष्ठा तथा संसार की संयम पूर्ण परिस्थितियों का चित्रण मिलता है। अंग्रेज़ी के माध्यम से पाश्चात्य साहित्य सिद्धांत के संपर्क में आकर हिन्दी कहानी अपनी आन्तरिकता को कालानुसारी बना लिया और अपने स्वरूप को बदल डाला। इस प्रकार आधुनिक कहानी का आरंभ हुआ।

आधुनिक हिन्दी कहानी की विकास यात्रा के दौरान हुए बदलाव के दो पडाव रहे हैं। एक पडाव प्रेमचंद की अंतिम कहानियों (पूस की रात, कफन, ठाकुर का कुआ) के प्रकाशन के द्वारा हुआ। कहानी के इतिहास में कई नवीन आंदोलन की शुरुआत इस समय पर हुई। दूसरे पडाव में कहानी साहित्य में नये आंदोलन की शुरुआत हुई। इसमें में लेखकों की एक ही, पीढ़ी बाद में नये आंदोलन के मुखिया के रूप में प्रस्तुत होती है। यशपाल, भगवती चरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतलाल नगर, विष्णु प्रभाकर आदि लेखकों ने नयी कहानी आंदोलन से पूर्व रचना प्रारंभ किया और छठे दशक तक उनकी कहानी रचना चलती रही। कहानी के इस परिवर्तित रूप को ही हम समकालीन कहानी का नाम देते हैं।

## 1. समकालीन

'समकालीन' अंग्रेज़ी शब्द contemporary का समानार्थ है, जिसका अभिप्राय है - "काल या समय के साथ-साथ हो। समकालीन एवं समकालीनता का मतलब केवल समय के साथ होना या रहना मात्र नहीं है, बल्कि समय (काल विशेष) के दबावों को झेलते हुए उनसे उत्पन्न तनावों और टकराहटों के बीच अपनी सर्जनशीलता द्वारा अपने अस्थित्व को प्रमाणित करना है।"[1] इस समय के रचनाकारों ने अत्यन्त जागरूक होकर अपनी सृजनात्मक प्रतिभा द्वारा समसामयिक जीवन की समस्याओं, अन्तर्विरोधों एवं जटिलताओं का समाधान ढूढने में सफल प्रयास किया। समकालीनता एवं साहित्य पर चर्चा करते हुए श्री अजय तिवारी ने लिखा - "समकालीनता में केवल वर्तमान का अंश नहीं रहता, अतीत की निरन्तरता भी रहती है। किसी भी समय समकालीनता में एक से अधिक प्रवृत्तियाँ उलझी हुई चलती है। समाज तो अनेक प्रकार की शक्तियों की आपसी क्रिया-प्रतिक्रिया से बनता है। इसलिए समकालीनता भी द्वन्द्वात्मक गतिमान एवं जीवन्त अवधारणा है। जिसे मानव व्यवहार और चिन्तन के बीच घात-प्रतिघात के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"[2] इस दृष्टि से देखे तो समकालीन कहानी अपने समय के साथ चलनेवाली साहित्यिक विधा मात्र नहीं है, उसमें समसामयिक जीवन की समस्याओं, अन्तर्विरोधों एवं जटिलताओं का समाधान ढूँढने का प्रयास भी है।

### 1.1 समकालीन परिवेश

जब समकालीन कहानी की उदय हो रहा था, तब तत्कालीन भारतीय जीवन परिवेश संतोषजनक नहीं था। 1962 में हुए चीन के आक्रमण ने हमारी अर्थ व्यवस्था को

---

1. हिन्दी उपन्यास - शिवनारायण श्रीवास्तव - पृ. 443
2. गिरिराज किशोर का उपन्यास साहित्य : एक अनुशीलन - डॉ. सुरेश चांगदेव साळुके - पृ. 78

बर्बाद किया। साथ ही साथ देश के विभिन्न अंचलों में भयंकर सूखा और अकाल, देश में नक्सलवादी प्रवृत्तियों का बोलबेला, मुँह फाडती महंगाई, देश में दिन-प्रतिदिन बढ़ती बेरोज़गारी और उसमें उत्पन्न युवा आक्रोश और देश में बढी हिंसा वृत्ति आदि की स्थिति आ गई। अकाल, सूखा, अतिवृष्टि, बाढ़ आदि ने देश में अन्न और खाद्य पदार्थों का संकट उत्पन्न कर दिया। बढ़ती जन संख्या ने भी देश में कई समस्याएँ उत्पन्न कर दीं। इनके फलस्वरूप देश की स्थितियाँ भी जटिल और विकराल बन गयी। इनकी अभिव्यक्ति समकालीन कहानी में हुई है।

## 1.2 समकालीन कहानी

समकालीन कहानी युग जीवन की प्रायः समस्त समस्याओं को अपने में समेटकर चलती है। जीवन के हर पहलू को झाँकने, टटोलने, परीक्षण-निरीक्षण करने और उन्हें कलात्मक अभिव्यक्ति देना समकालीन कहानीकार अपना लक्ष्य समझते हैं। इस युग में कहानी वैज्ञानिक यथार्थ की वस्तुपरक जाँच की शुरुआत की थी। सामाजिक चेतना को महत्व मिला और कहानी का मुख्य विषय मध्यवर्ग तथा निम्नवर्ग से आम आदमी की समाजार्थिक पीडा रहा था। रचनाकारों ने कहानी में क्षमता तथा शक्ति सुरक्षित रखी। रामदरश मिश्र के शब्दों में - "आम आदमी को कहानियाँ प्रमुख रूप से अनेक अर्थमूलक यथार्थ को उद्‌घाटित करती है। इस दुनिया में राजनीति, सामाजिक, धर्म, सभी मूल्य संबन्धित है। इसलिए ये आम आदमी के संघर्ष, गुस्सा, विद्रोह और वर्गीय समझ को उजागर कर नये सामाजिक बदलाव की आहट करना चाहती है।"[1] नयी पीढ़ी के सारे नवलेखन संघर्षशील मुद्रा के कारण आक्रोशशील है। ये समकालीन कहानीकार भ्रष्ट राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक व्यवस्था पर तीखा कटाक्ष करती हुई वर्तमान जीवन स्थितियों का साक्षात्कार कराते हैं। इन कहानियों में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों के अनछुए

---

1. कहानी की आंदोलन की भूमिका - बलराज पाण्डेय - पृ. 210

प्रसंग और स्थितियाँ अपने पूर्ण विवरणों में पूरी ईमानदारी और लेखकीय सोच या प्रतिक्रिया के साथ चित्रित है। इसलिए समकालीन कहानी पूरी जीवंतता से अपने परिवेश से जुडी हुई है। जीवन स्थितियों के तीव्र बदलाव के कारण जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्यों में परिवर्तन आया है। मूल्यों के प्रति बदलती हुई दृष्टि पूरी तरह समकालीन कहानी में चित्रित हुई हैं।

### 1.2.1 समकालीन कहानी और पारिवारिक संबन्धों का चित्रण

पुराने जमाने में संबन्धों में सुदृढ़ता थी। परिवार के लोग तो एक बनी-बनाई पारिवारिक स्थिति के भीतर सीमित रहते थे। तेज़ रफ्तार से भरा जीवन और आधुनिक परिस्थितियों ने आज पूरा परिवेश को बदल चुका है। आज संबन्धों के बीच अनाम दूरियाँ आ गई है। इन परिवर्तनों का मुख्य कारण मूल्यों का विघटन है। परिवार में माँ-बाप भाई-बहन, पिता-पुत्र-पुत्री आदि के सुदृढ़ संबन्धों में परिवर्तन आ गया है। संयुक्त परिवारों के, अणु कुटुम्बों में परिवर्तन ने रिश्तों में दरार पैदा की है। माँ-बाप को दिये जानेवाले आदर और प्रेम कम होने लगी है। पति-पत्नी के बीच सम-सह योजना जो दाम्पत्य जीवन की आधारशिला थी, वह भी कम होने लगे है। समकालीन कहानीकारों ने संबन्धों में आए इन परिवर्तनों को बखूबी प्रस्तुत किया है। रमेश बक्षी की 'पिता दर पिता', जगदीश चतुर्वेदी की 'अंधखिले गुलाब', महेश्वर की 'अस्विकार बंद, बेकु आम स्पर्श', गिरिजा किशोर की 'शहर दर शहर', दीप्ति खण्डेलवाल की 'कडवेसच', मृदुला गर्ग की 'कितनी कैद', निरुपमा सोवती की 'आतंकबीज', मणिका मोहिनी की 'अनल की नंबर' आदि कहानियों में घर परिवार के संबन्ध में रिश्तों की पुर्नव्याख्या की गई है। इन कहानियों में संबन्धों के लशकर के व्यक्ति आज अपने को बहुत अकेला महसूसता है। पारिवारिक विघटन का मूल कारण व्यक्ति चरित्रों का न खुलापन या संकीर्णता है। संबन्धों के बीच व्यक्ति का अकेलापन समकालीन कहानी में विशेष रूप से चित्रित हुआ है।

### 1.2.2 समकालीन कहानी और आर्थिक दृष्टि

आर्थिक दृष्टि से सामान्य भारतीय का जीवन अत्यन्त कठिन हो गया। सन् 62, 65 एवं 71 के भारत-चीन और भारत-पाक् युद्धों का अर्थव्यवस्था पर बडा दबाव, अकाल, सूखा और अति वृष्टि के कारण देश में बढ़ती भूखमरी और खाद्य पदार्थों के अभाव में उत्पन्न संकट, महँगाई आदि ने समकालीन कहानियों के आरंभ में जीवन जीने की स्थितियों को संकीर्ण बना दिया। शिक्षा, योग्यता और प्रतिभा के दारुण अवमानना और भ्रष्ट व्यवस्था युवा मानस के स्वप्नों को तोड घोर आर्थिक यंत्रणा में डाल दिया। समकालीन कहानी जीवन की सच्चाइयों से जूझती हुई भयावह यथार्थ का साक्षात्कार करती है। काशीनाथ सिंह (तीन काल कथा), कमलेश्वर (इतने अच्छे दिन), प्रभुजोशी (पितृ ऋण), महेश्वर (मृत्युदण्ड), सुदीप (कितना पानी), जितेन्द्र भाटिया (शहादतनामा), स्वदेश दीपक (तमाशा) आदि ने बहुत शक्तिशाली कहानियों की रचना की। समकालीन कहानी मनुष्य की इस लड़ाई में सहभागी बनकर आई है। इसलिए समकालीन कहानी में जीवन का आर्थिक पक्ष अपनी समस्त समस्याओं के साथ अत्यन्त महत्वपूर्ण हो उठा है।

### 1.2.3 समकालीन कहानी और राजनीतिक दृष्टि

राजनीति जीवन किसी भी प्रसंग से अलग नहीं है। वह जिन्दगी के हर क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। राजनीति की संकल्पना सामाजिक संगठन के रूप में हुआ है। सामाजिक सदस्य होने के नाते हर व्यक्ति राजनीति में जाने-अनजाने हिस्सेदार हो जाता है। समकालीन कहानी अपने समय की राजनीतिक गति-विधियों में जीवन का राजनीतिक पक्ष बहुत अच्छी तरह उजागर करती है। आज लेखक राजनीति को अपने लेखन से इसलिए अलग करके नहीं देख सकता कि उसके जीवन यथार्थ की स्थितियों को गढ़ने में राजनीति का बहुत बड़ा हाथ है। इसलिए राजनीति जीवन के (छल-छद) की (धाँधलेबाज़ी)

राजनीतिज्ञों द्वारा चुनाव में जनता का शोषण इससे किए गए वायदे और उनका थोथापन चुनावों के समय तथा चुने जाने के बाद की स्थितियों पर समकालीन कहानी भरपूर प्रकाश डालती है। गोविन्द मिश्र, अमृतराय, गिरिराज किशोर, काशीनाथ सिंह, सनत कुमार, मधुकर सिंह, श्रवण कुमार, मणि कुमार आदि की कहानियाँ जीवन के इस पक्ष को उजागर करती है। अपने समय की सच्चाइयों से मुँह मोडकर कोई भी साहित्यिक कृति युग सत्य को शाश्वत सत्य से नहीं जोड सकती। समकालीन कहानी समकालीन जीवन की पूरा तस्वीर पेश करती हुई उसके राजनीतिक पक्ष का भी संगेपांग चित्रण करती है।

### 1.2.4 समकालीन कहानी और सामाजिक दृष्टि

मनुष्य समाज में रहने के नाते उसे सामाजिक व्यापारों का पालन करना पड़ता है। साहित्यकार समाज में ही घटित होनेवाली घटनाओं को अपनी कल्पना शक्ति के सहारे प्रस्तुत करता है। ऐसा करते समय समाज के लोगों की व्यक्तिगत समस्याओं का भी चित्रण और हल भी साहित्य में प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं। समकालीन कहानीकार आधुनिक होने के कारण उनके साहित्य में आधुनिकता का समावेश है। समकालीन कहानी साहित्य में बहु संस्कृतियों का पल्लवन दिखाई देता है। वे समाज में अपनी रचनाओं द्वारा नये दृष्टि एवं विकास लाना चाहते हैं।

समाज सापेक्ष कहानियों में सामाजिक जीवन की विविधता का पूरा प्रदर्शन किया जाता है। इनमें कहानीकार समाज की भिन्न-भिन्न समस्याओं का विश्लेषण तथा उनका निदान खोजता है। ये समस्याएँ एक व्यक्ति अथवा एक परिवार से लेकर समूचे समाज की हो सकती है। आधुनिक समाज की मुख्य समस्याएँ हैं - भ्रष्टाचार, महानगरीय, समस्या, नारी समस्या, साहित्यकारों की समस्या, अधिकारियों की स्त्री लंपटता, दाम्पत्येतर संबन्ध आदि। समकालीन कहानी इन सामाजिक समस्याओं को नये दृष्टि से परखती हैं।

## 1.3 समकालीन कहानी और नया भावबोध

समकालीन कहानी एक नये भावबोध की कहानी है। वह न शास्त्रीय है और न रोमानी। वह आज के जीवन के अनुकूल है। उसमें जीवन की गहरी पहचान बनी है। सामाजिक प्रतिबद्धता तथा नवीन चेतना का संचार भी है। हर कहानी इंसानी दुःख-दर्द की कहानी बन गई है। उसमें एक सत्य जुड़ा हुआ है। जीवन के हर पहलू को झाँकने-टटोलने, परीक्षण निरीक्षण करके उन्हें कलात्मक अभिव्यक्ति देना कहानीकार अपना ध्येय मानते हैं। समकालीन कहानी में निश्चय ही नये विषयों की पकड है, यथार्थ के अनुछुए आयाम है, महानगरों के जीवन के विचित्र छायारंग है। वह युग जीवन की प्रायः समस्त समस्याओं को अपने में समेटकर चलता है।

## 1.4 समकालीन कहानियों का प्रवृत्तिगत विश्लेषण

आज के कहानीकार परिवेश के प्रति जागरूक है। यथार्थ को सच्चाई के साथ ग्रहण करता है। समकालीन कहानी के यथार्थ के वैशिष्ट्य को कमलेश्वर के शब्दों में कहा जा सकता है - "बडे पैमाने पर चल रही यथार्थ की लड़ाई में शामिल कहानियाँ है। ये मुज़रिसम आदमी की बदलती हुई धारणाओं उसके प्रशनों और चिंताओं की लिखित तहसीर ही नहीं बल्कि समय में लिये गये उसके फैसलों की यथार्थ प्रतिलिपियाँ भी है। ये कहानियाँ आम आदमी के समय संदर्भों में जन्म लेनेवाले जलते प्रशनों के यथार्थ मूलक द्विधारित कदम है। इस प्रकार ये कहानियाँ आम आदमी की लड़ाई के कदम है, जो विभिन्न मोर्चों पर व्यवस्था के खिलाफ लड रहा है।"[1] इस प्रकार समकालीन कहानी में परंपरा एवं आधुनिकता का समावेश है। उसमें आम आदमी की खोज भी शामिल है।

---

1. समकालीन हिन्दी कहानी यथार्थ के विभिन्न आयाम - डॉ. ज्ञानवती अरोडा - पृ. 82

### 1.4.1 समकालीन कहानी : शिथिल मानवीय संबन्ध

मानव जीवन की प्रगति के लिए संबन्धों में पवित्रता एवं प्रगाढ़ता अवश्यक है। यह व्यक्ति को परिवार एवं समाज के स्तर पर उत्साही एवं शक्तिशाली बना देती है। लेकिन उत्तर आधुनिक युग में हर मानवीय संबन्धों के पीछे स्वार्थ की प्रवृत्ति पायी जाती है। समकालीन कहानीकारों ने आज के मतलब परस्त संबन्धों को कई कोणों से आंकने परखने और अभिव्यक्ति देने का प्रयास किया है। समय के अनुसार समाज बदलती है और इस कारण समाज में रहनेवाले व्यक्तियों के दृष्टिकोण में भी परिवर्तन आया है। आधुनिक युवा वर्ग विदेशी संस्कृति के पीछे भाग रहे हैं। भारतीय परंपरा में पहले संयुक्त परिवार की संकल्पना को महत्व दिया जाता है। संयुक्त परिवार में व्यक्ति के कष्ट सुख में शामिल होने के लिए घरवाले हमेशा रहते थे। इस कारण मानसिक तौर पर व्यक्ति हमेशा सक्ष्म रहता था। लेकिन आज अणु कुटुम्ब की स्थापना हो गई है। परिवार माँ बाप और बच्चे तक सीमित हो गया है। बच्चे भी बडे होकर शिक्षा तथा नौकरी के लिए घर से अलविदा लेते हैं। यह तो मानवीय संबन्ध में शिथिलता पैदा करता है।

जीवन और समाज के फलस्वरूप व्यक्ति को एकाकीपन अजनबीपन और ऊब की अनुभूति होती है। यह सत्य है कि आपसी संबन्धों से टूटा हुआ मानव अधिक से अधिक अजनबी या अकेले होते चले जाता है। आज के मनुष्य को चारों ओर मृत्यु-भय, संत्रास, अकेलापन और अजनबीपन की बोध निगल रहा है। महानगर में व्यक्ति को अपना अस्तित्व नष्ट होने का डर है। आदमी आदमी को नहीं पहचानता। सारे संबन्ध औपचारिक बनकर रह गये है। आज वैयक्तिक स्तर पर विघटित व्यक्तित्व धीरे-धीरे सामाजिक जीवन से अपरिचय बोध से जुट जाता है। इसका अनिवार्य परिणाम व्यक्तित्व को कुंठित और सत्रस्त बना देता है। यह स्थिति भयानक मूल्यहीनता की उपज हैं। मनुष्य में स्नेह और अपनत्व के भाव खत्म होते जा रहे हैं। कृत्रिमता और औपचारिकता ही

उसकी जिन्दगी की प्रत्येक क्रिया में समाहित होती जा रही हैं। मालती जोशी के 'अंतिम संक्षेप' नामक संग्रह में संकलित 'क्षण' शीर्षक कहानी में भी संतानों की उपेक्षा के कारण जिंदगी की साँझ में घुटन का जीवन जीने को मज़बूर माँ का चित्रण हुआ है। शिथिल होते मानवीय संबन्ध का कुछ दूसरा रूप ममता कालिया की 'तासीर' शीर्षक कहानी में है। धन केन्द्रित समाज व्यवस्था में प्रेम, ममता, करुणा, दया आदि का महत्व भी आजकल नष्ट होता है। राजेन्द्र दानी की 'विस्थापन' अशोक अग्रवाल की 'मकर संक्रान्ति' शीर्षक कहानियों में भी मानवीय संवेदना का चित्रण दर्शाया है।

### 1.4.2 समकालीन कहानी : उपभोक्तावादी संस्कृति

उपभोक्तावादी संस्कृति ने व्यक्ति परिवार एवं समाज के संतुलन को भंग कर दिया है। धन केन्द्रित समाज ने सभी मानवीय गुणों की तिलांजलि कर दी है। बाजारवादी तंत्र ने व्यक्ति व समाज को अपने जाल में फँसा दिया है। असीम धन की चौकाचौध ने महानगरीय जीवन में संस्कृति के स्थान पर कुसंस्कृति पैदा की है। ज्ञान प्रकाश विवेक की इमारतें शीर्षक कहानी में उपभोक्तावादी संस्कृति के प्रतीक के रूप में एक सिंगल स्टोरी और मल्टी स्टोरी इमारत को दिखाया है।

उत्तर आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था की जडें बेईमानी, चापलूसी, भ्रष्टाचार रूपी खम्भों में टिकी हुई है। जो कोई ईमानदारी से इस भ्रष्ट व्यवस्था को सुधारने का प्रयास करता है, वह खुद व्यवस्था रूपी ओक्टोपस की चंगुल में फँस जाएगा। 'उजाड' शीर्षक कहानी का नायक वासन इस तरह के चंगुल में फँस जाता है। बाजारवादी व्यवस्था इतनी क्रूर और निस्संग है कि दीन-हीनों को नज़र अन्दाज़ करती है। ज्ञानप्रकाश के 'अर्थ एवं बर्फ' शीर्षक कहानियाँ इस क्रूर व्यवस्था की झाँकियाँ प्रस्तुत करती है। इस युग में जीवन का सिद्धान्त बदल गया है। भ्रातृत्व, दया, ममता, करुणा आदि भावनाएँ

काफी पुरानी पड़ चुकी है। आज हर व्यक्ति एक दूसरे को अपना शिकार मानता है। उत्तराधुनिक युग का सबसे बडा अभिशाप है कि सहजीवी पर कोई अत्याचार हो जाय, दुर्घटनाग्रस्त हो जाये तो भी लोग भीड बनकर देखते जाते हैं। कोई तर्क, प्रतिक्रिया या बीच-बचाव कुछ भी नहीं करते। कैलाश जया-मित्र की 'सीख' कहानी में यही निस्संगता का चित्रण मिलता है। आधुनिकीकरण एवं वैश्वीकरण के इस जमाने में संपन्नवर्ग मुहल्ला-दर मुहल्ला, शहर-दर-शहर को अपने कब्जे में कर लेते फिरते हैं। गरीब अधिकाधिक गरीब होते जा रहा है। प्रशासन, अधिकारी, व्यवस्था एवं राजनैतिक नेता भी संपन्नों की उँगली के इशारे पर नाच रहे हैं।

### 1.4.3 समकालीन कहानी : व्यवस्था की अमानवीयता एवं भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार एवं अव्यवस्था सर्वव्यापी तथ्य बन गये हैं। इसका असर सरकारी व गैरसरकारी क्षेत्रों में पडा है। समकालीन कहानीकारों में ऐसा कोई भी नहीं होगा, जिसने इस मुद्दे को नहीं उठाया हो। इस पर रोक लगाने का प्रयास ज़ारी है, फिर भी इसे रोकने का कोई असर दिखायी नहीं दे रहा है। राजेन्द्रदानी की कहानी 'पदार्पण' का मुख्य अफसर अव्यवस्था पर जाँच पडताल के लिए निकल पडता है। लेकिन दफ्तर के किसी एक संगठन के नेता की कानाफूसी एवं चापलूसी में पड़कर दफ्तर के सबसे अव्वल भ्रष्ट्चारी के साथ चाय बिस्कुट का मज़ा लेते हुए कुशल क्षेम पूछते दिखायी देता है। व्यवस्था को सुधारने का यत्न हर युग के रचनाकारों ने किया है। प्रेमचंद ने गरीबों व दीन-हीनों को दोनों हाथों से लूटनेवाले ज़मींदारी व महाजनी व्यवस्था के खिलाफ अपनी लेखनी उठायी। यशपाल ने इस व्यवस्था के खिलाफ अपनी लेखनी को हथौडा बनाया। उन्होंने लिखा था - "केवल स्वराज्य के बाद टोपी ही बदला है। अंग्रेज़ तो चले गये, लेकिन उनका काला शासन अब भी ज़ारी है।"[1]

---

1. समकालीन हिन्दी कहानी : अन्तरंग पहचान, सी.एम. योहन्नान - पृ. 144

सरकारी कर्मचारी को मात्र अपने काम के प्रति निष्ठा एवं वफादारी नहीं रखनी है बल्कि किसी पार्टों के समर्थक एवं कार्यकर्ता रहकर अपनी वफादारी भी प्रकट करती है। नागरिकों को जन-प्रतिनिधि से मुलाकात के लिए सचिवालय या मंत्री भवनों के अहातों का चक्कर काटते-काटते समय गुज़ारना पड़ेगा। सरकारी कर्मचारी का जागरूक ईमानदार एवं प्रतिबद्ध रहना, राष्ट्र समाज और जनता के लिए अत्यन्त लाभदायक है। समकालीन कहानियों में पुलीन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं अमानवीयता का बराबर उल्लेख पाया जाता है। पुलिसवालों के हरकतों को देखकर कभी-कभी संदेह भी होता है कि पुलिस भक्षक है या रक्षक। माहेश्वर की 'ठिठुरन' शीर्षक कहानी में पुलिस के हाथों चढ़ी लड़की के साथ पुलिस की संभावित अत्याचार का अनुभव करके उसे बचाने के लिए चाकू निकालकर निकल पडनेवाले व्यक्ति का चित्रण हुआ है।

### 1.4.4 समकालीन कहानी : नारी शोषण

पिछडी जन जाति शिक्षित होकर आजकल समाज की मुख्य धारा में आने लगी है। शिक्षा, वेश-भूषा, रहन-सहन और तौर तरीके में वे अपने पिछडेपन के बन्धनों से मुक्ति पा रही हैं। नारी शोषण के विभिन्न पहलुओं का मार्मिक उल्लेख करनेवाली कई कहानियाँ विवेच्य काल में रची गयी है। अजीत कौर की 'गुलबानो' और 'एक इतिहास यह भी' में विशेष रूप से स्त्री शोषण का चित्रण मिलता है। स्त्री के प्रति पुरुष के एकाधिकार की भावना या उसे चौबीसों घण्टों की दासी मानने की प्रवृत्ति भले ही सामन्ती युग की देन है, लेकिन समकालीन समय में भी यह प्रवृत्ति हमारे सामाजिक जीवन में विद्यमान है। जया मित्रा की कहानी 'अंधकार की उत्स' में प्रताडना से तंग आकर उस पर कुल्हाडी मारनेवाली पत्नी का उल्लेख हुआ है। अरुण प्रकाश की कहानी 'बेला एक्का लौट रही है' में आदिवासी स्त्री की अस्मिता और नौकरी के स्थान पर नारी शोषण की समस्या को उठाया गया है। इन कहानियों में हमें सत्य घटना का ही वर्णन मिलता है।

### 1.4.5 समकालीन कहानी : सामाजिक विषमता

समकालीन कहानिकारों ने सामाजिक विषमता को पूरी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत किया है। बाजारवादी तंत्र ने समाज के एक हिस्से को अधिकाधिक धनी बना दिया है, तो दूसरा हिस्सा अधिकाधिक गरीब और अभावग्रस्त हो गया है। सुविधा संपन्न लोग भोग विलास और ऐशों-आराम में मशगूल रहते हैं, जबकि दीन-हीन गरीब उनकी दृष्टि में मजाक की चीजें बन जाती है। स्वयं प्रकाश की कहानी 'अगले जनम', अरुण प्रकाश की 'गजपुराण', कैलाश वनवासी की 'प्रतीक्षा' आदि कहानियों में सामाजिक समस्याओं का चित्रण है।

## 1.5 समकालीन कहानी - विभिन्न परिवेश में

साहित्य को समाज का दर्पण माना जाता है। हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल से आज तक सामाजिक परिवर्तनों के अनुसार विभिन्न प्रवृत्तियाँ दिखाई देती है। इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के कथा साहित्य में न केवल समाज का प्रतिबिंब है बल्कि मानव समाज के भविष्य का कल्पना चित्र अपनी गहरी वास्तविकता के साथ चित्रित हुआ है। समाज की सारी अच्छाई, और बुराई के साथ सत्य शिव सुंदर की भावना को लेकर चलनेवाले कथा साहित्य में मूलतः निम्न विषयों की चर्चा दिखाई देती है - ग्रामीण परिवेश, दलित साहित्य, आदिवासी साहित्य, भूमंडलीकरण, पारिस्थितिकी, सांप्रदायिकता तथा नारी लेखन।

### 1.5.1 ग्रामीण परिवेश में

सन् 60 के बाद के समय की कहानी मुख्तः नगर या महानगर केन्द्रित हो गयी। जो कहानीकार ग्रामीण जीवन परिवेश छोड़कर नगर या महानगर में आ बसे थे, उनकी कहानियों में गाँव छोड़ने का दर्द या गाँवों के परिवेश और जीवन मूल्य छूट जाने

की व्यथा बडी गहराई से चित्रित हुई है। ग्रामीण कथा लेखन में जिन कथाकारों ने ग्रामीण जीवन परिवेश के चित्रण में अपनी पहचान कायम की उनमें फणीश्वर नाथ रेणु, शिवप्रसाद सिंह, कमलेश्वर, मार्कण्डेय, विवेकराय, चन्द्र प्रकाश पाण्डेय, प्रभु जोशी, मधुकर सिंह, असगर वजाहत आदि के नाम विशेष महत्वपूर्ण है। शेखर जोशी वल्लभ डोभाल, शिवानी जैसे कथाकारों ने विशेषतः पहाड़ के ग्राम्य जीवन परिवेश से साक्षात्कार कराने का श्रेय दिया जा सकता है।

### 1.5.2 आंचलिक परिवेश की कहानियाँ

फणीश्वर नाथ रेणु की कहानियाँ आंचलिकता के रंग में रगी हुई जीवंत तस्वीर प्रस्तुत करती है। शिवप्रसाद सिंह की कहानियाँ ग्रामीण समाज की विभिन्न विसंगतियों से साक्षात्कार कराती है। उनकी 'हत्या और आत्महत्या के बीच में' नामक कहानी में अनमेल विवाह की त्रासद स्थितियों को भोगती शोभा बुआ का मार्मिक चित्रण हुआ है। भौख प्रसाद गुप्त की कहानियाँ ग्रामीण जीवन का अच्छा चित्रण करते हुए भी मार्क्सवादी सोच के लेखन बन जाती है। इनके कहानियों में वर्ग संघर्ष की भावना चित्रित हुई है। समाज का दलित और शोषित, मज़दूर वर्ग व्यवस्था के ठेकेदारों के जुल्म चुप होकर सहन नहीं करता वह उन्हें खुल कर चुनौती देता है। कमलेश्वर, मार्कण्डेय, विवेकराय आदि की कहानियों में उन नायकों का चित्रण मिलता है जो गाँव का जीवन परिवेश और मूल्य छूट जाने पर शहर या महानगर में आकर उसके लिए तडपते रहते हैं।

### 1.5.3 जनजीवन का अत्यंत प्रमाणिक चित्रण

भीमसेन त्यागी की कहानियों में कौरवी क्षेत्र का जन-जीवन अत्यंत प्रामाणिकता से चित्रित किया गया है। इनकी कहानियों के पात्र उस जीवन से अत्यंत प्रामाणिक पहचान स्थापित करते हैं। इनकी कहानियों के पात्रों की भाषा ही नहीं, बल्कि मनःप्रवृत्तियाँ

उसी प्रकार की विश्वसनीयता ली हुई है। उनकी प्रमुख आँचलिक कहानियाँ हैं - 'कोई नहीं', 'तीसरा आदमी', 'कवि प्रिया' आदि। इन सभी कहानियों में ग्रामीण जीवन का अत्यंत घनिष्ठ परिचय मिलता है और गाँव समाज की उस छवि को मूर्तित करता है जो स्वतंत्रता के बाद के इन वर्षों में बनी है। उनकी कहानियों की सबसे बडी खूबी यही है कि उन्होंने निकट से देखा एवं भोगा गया जीवन तथा समाज का ही चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

रामदरश मिश्र की कहानियाँ भी ग्रामीण कथा लेखन में विशेष महत्व रखती है। ये कहानियाँ यदि सामाजिक स्तर पर गाँव की गरीबी, किसान आदि के शोषण को चित्रित करती हैं तो वैयक्तिक स्तर पर उस वैचारिकता से परिचित कराती हैं। जिसे गाँव की मानसिकता में आधुनिकता का संचरण कहा जा सकता है। उनकी 'एक अधूरी' कहानी में नैतिक मानों को खुलकर चुनौती ही नहीं देती उन्हें भंजित भी करती है।

### 1.5.4 गाँव और शहर का तुलनात्मक चित्रण

गाँव की पीढ़ियाँ जब शहरों में पहुँचती है तो वहाँ अपना गाँव और उसकी मर्यादाएँ खोजती हैं और जब वर्षों नौकरी की जिन्दगी बिताकर गाँव लौटती है तो वहाँ शहरी सुविधाएँ और जीवन पद्धति तलाशती है। गोविन्द मिश्र की 'कचकौध', निर्मला ठाकुर की 'बेघर दीवारे', प्रभु जोशी की 'उखडता हुआ बरगद', अकुलेश परिहार की 'डूबता सूरज' आदि कहानियों में शहरी तथा गाँव की ज़िन्दगी का तुलनात्मक ढंग से चित्रण मिलता है।

### 1.5.5 गरीबी व आर्थिक बोझ में दबे लोगों का चित्रण

कुछ ग्रामीण कहानियों में गाँव की गरीबी का चित्रण ही नहीं उस परिवेश का साक्षात भी कराया गया है, जिसकी एक पीढ़ी तो गाँव में रहकर गरीब से गरीब होती जा

रही है। किन्तु शहर में शिक्षा प्राप्त करने गया लडका शहरी जीवन की अपनी आशा-आकांक्षाओं और अपने ग्रामीण परिवार की आर्थिक तंगदस्तियों के बीच त्रिशंकु बनकर जीता है। चन्द्र प्रकाश पाण्डेय की 'निरुपायताओं की बोझ' एक ऐसी सशक्त कथा है जिसमें ग्रामीण जीवन का यह पक्ष बडी प्रामाणिकता से चित्रित हुआ है। कहानी आज के गाँव की बहुत सही तस्वीर पेश करती है जिसमें किसान या गाँववासी स्वयं आर्थिक निरुपायताओं की बोझ में दबने के बावजूद भी अपनी भावी पीढ़ी को शहर में भेजकर उसके लिए सुख पुराने के लिए कृत संकल्प है।

### 1.5.6 गाँव की जनता का वास्तविक चित्रण

मधुकर सिंह, मणि मधुकर, असगर वजाहत, आलमशाह खान, मिथिलेश्वर, जगवीर सिंह वर्मा आदि की कहानियों में स्वतंत्रता के बाद के गाँव - समाज का परिवर्तित परिवेश पूर्णतः आधुनिक समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में देखा गया है। राजनीति में गाँव का महत्व बढ़ जाने से वहाँ भी चुनाव आदि की गलाजत बढ़ी है। इन कहानीकारों ने गाँव के आदमी की कल्पना की तस्वीर को छोडकर उसकी सही तस्वीर प्रस्तुत की है। मधुकर सिंह के बुद्ध कहानी में ग्रामवासियों के लिए अपने कथा पात्र से कहलाते हैं - "ये लोग चालाक कितने हैं। मौका मिले तो बेचकर खा जाएँ। गाँव का आदमी इतना धूर्त पहले कभी नहीं था। इसलिए कभी-कभी लगने लगते हैं कि गाँव को दृष्टि हीन आज़ादी मिले हैं जो उनके श्रेष्ठ को समाप्त कर नित्य प्रति उनको प्रत्येक दृष्टि से पतन की ओर ले जा रही है।"[1]

### 1.5.7 गाँव के परिवर्तित परिवेश और जीवन पद्धति का चित्रण

मणि मधुकर की कहानियों में राजस्थान के विशेषतः पाकिस्तानी सीमा से लगे, गाँव की जिन्दगी अपनी प्रमाणिकता में उकेरी गई है। 'फाँसी', 'त्वमेव माता',

---

1. समकालीन कहानी सोच और समझ - डॉ. पुष्पपाल सिंह - पृ. 96

'चन्द्रग्रहण', 'उजाड' और 'अधमरे' आदि उनकी बहुत सशक्त कहानियाँ है। असगर वजाहत की 'खसबू' तथा अल्मशाह खान की 'एक और सीता' भी ग्राम्य जीवन की अच्छी कहानियाँ है। आर्थिक मसलों को लेकर भाई-भाई के बीच की समस्यायें परिवारों में आपसी फूट उत्पन्न होने का कारण गाँव की जनता थाने कचहरी और विभिन्न प्रकार की गुट बन्दियों में पड जाना आदि का सशक्त चित्रण दूसरा महाभारत जैसी कहानियों में मिथिलेश्वर ने किया है। वस्तुतः इनकी कहानियाँ गाँवों के परिवर्तित परिवेश और जीवन पद्धति से गहरी पहचान स्थापित कराती है। जगवीर सिंह वर्मा के 'घर कहीं नहीं है', नामक कहानी में साँस-बहू के मध्य हुई तकरार में बेटा जिस संघर्षपूर्ण मनःस्थिति को जीता है, उसका जीवन्त आलेखन इस कहानी में हुआ है। आधुनिकता और पुरातनता के मध्य झूलते भारतीय ग्रामीण नवयुवक की पीडा को यहाँ बहुत सशक्त ढंग से चित्रित किया गया है। यह कहानी गाँवों की मानसिकता से अत्यन्त निकट का साक्षात्कार कराती है।

इस प्रकार समकालीन कहानिकारों ने अपने कहानियों में ग्रामीण जीवन परिवेश के कुछ सशक्त चित्र समकालीन हिन्दी कहानीकारों ने प्रस्तुत किए हैं।

## 1.6 दलित विमर्श : कहानियों में

सन् सत्तर अस्सी के समय हिन्दी साहित्य जगत में जो दलित आंदोलन हुआ था, उसके समर्थन करते हुए जो साहित्य रचा गया वही दलित साहित्य है। यह साहित्य दलित द्वारा दलितों के लिए लिखा गया साहित्य है। अपने लिए भाषा, संस्कार, इतिहास सब खुद गढ़ लेना दलितों के लिए चुनौती रही। इन सारी प्रतिकूलताओं को सामना करके दलित यही माँग रखते हैं कि हम भी मनुष्य है और हमें मनुष्य के समान जीने का अधिकार चाहिए। दलित इस अधिकार के लिए लड रहे हैं।

शोषण चाहे मानसिक हो या सामाजिक या धार्मिक उसके विरुद्ध विद्रोह होगा ही। उसमें समय कितना भी लग सकता है। भारत में शताब्दियाँ बीत गयी धर्म के नाम पर एक वर्ग को सामाजिक मानसिक और आर्थिक शोषण सहते हुए उसके विद्रोह का विस्फोट हुआ। उस विस्फोट का ही परिणाम है दलित साहित्य। दलित साहित्य दरअसल दलित लेखकों द्वारा लिखित वह साहित्य है जो सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और मानसिक रूप से उत्पीडित लोगों की बेहतरी के लिए लिखा गया हो। जो सच्चे अनुभवों पर आधारित हो और जीवन्त भाषा में लिखा गया हो।

साहित्य के क्षेत्र में नई चेतना का जन्म सामाजिक, सांस्कृतिक, अभिसरण के फलस्वरूप होता है। हर बार यही देखा गया है कि समाज में होनेवाले परिवर्तनों का सही रूप साहित्य में प्रकट होता है। दलित साहित्य मराठी साहित्य में सामाजिक परिवर्तन की माँग को लेकर पहली बार प्रस्तुत हुआ है। उसके पश्चात् हिन्दी में दलित साहित्य का उदय दिखाई देता है। इतिहास में दृष्टिपात करने पर हम पाते हैं कि दलित संघर्ष के प्रणेता नव जागरण युग में डॉ. बी.आर. अंबेडकर माने जाते हैं जो दलितों में ईश्वरीय शक्ति के अवतार के रूप में स्वीकार हुए है।

### 1.6.1 हिन्दी साहित्य में दलित और उनकी चेतना

भारतीय समाज में एक बहुत बडे हिस्से को समाज ने हमेशा टुकराकर अपमानित किया और मनुष्य होकर भी उसके साथ पशु से भी बेहत्तर व्यवहार किया। यह अहसास वेदनामय है और यह वेदना एक व्यक्ति की नहीं पूरे दलित साहित्य में व्यक्त हुई है। दलित साहित्य की निर्मिति सामाजिक परिवर्तन का ही परिणाम है। यह दलित साहित्य सामाजिक तथा साहित्यिक विद्रोह के रूप में आया। दलित साहित्य से व्यक्त होनेवाला अनुभव मौलिक अनुभव है। इस अनुभव की मुख्य प्रेरणा स्वतंत्रता है। हिन्दी में प्रेमचन्द

से लेकर उत्तर शती तक के कथाकारों ने दलित चेतना को अपने साहित्य में उभारने की भरसक कोशिश की है।

### 1.6.2 हिन्दी कहानियों में दलित चेतना की शुरुआत

सातवें दशक की कहानियों में दलित चेतना को उभारने का प्रयास नहीं हुआ था। हिन्दी कथा साहित्य में दलित चेतना की अभिव्यक्ति के दृष्टिकोण से आठवाँ दशक महत्वपूर्ण है। श्री रमेश कुमार ने अपने लेख में लिखा है कि - "आठवें दशक के समान्तर आंदोलन के माध्यम से समाज के कमज़ोर वर्ग की समस्याओं को कहानी का केन्द्र बनाया गया। स्वतंत्रता के पचास वर्ष बाद भी निम्न दलित वर्ग का जीवन बंद से बंदतर होता चला गया है। ऐसी स्थिति में दलित उन्नायकों ने अपनी कहानियों के माध्यम से इस वर्ग के जीवन का यथार्थ निरूपण किया है। इन कहानियों में दलित मानव की वेदना निरन्तर संघर्ष करते रहने की अनिवार्यता, सुविधाभोगी लोगों के प्रति उनकी विरोध मुद्रा, प्रतिकूल नाटकीय स्थिति में भी जीने की विवशता और अपने मानवीय अधिकारों की प्राप्ति हेतु आत्म सजगता जाग्रत हुई है।"[1]

### 1.6.3 दलित रचनाकार

स्वतंत्रता के बाद पढ़ लिखकर साहित्य में आये दलितों ने भी कलम पकडी, उसका प्रारंभ तो कविता से ही हुआ। धीरे-धीरे वह कहानी की ओर भी आये। दलित चेतना की कथाओं के रूप में श्री सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, प्रेमचन्द, शिव प्रसाद सिंह आदि के एक पृष्ठभूमि प्रदान की और उस पर जिन दलित कथाकारों ने दलित कथा का सृजन करने का प्रयास किया उनमें सर्वश्री ओम प्रकाश वाल्मीकी, पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी,

---

1. दलित साहित्य के प्रतिमान - डॉ. एन. सिंह - पृ. 30

मोहनदास नेमिशराय, दयानन्द बटोही, रघुनाथ प्यास, शिवचन्द्र उमेशा, काली चरण स्नेही, बी.एल. नय्यर आदि के नाम उल्लेखनीय है।

### 1.6.4 कमलेश्वर की भूमिका

दलित चेतना को पूरी तडप के साथ हिन्दी साहित्य में परिचय कराने में कमलेश्वर का महत्वपूर्ण योगदान है। कमलेश्वर ने 'सारिका' पत्रिका ने विशेषांक निकाले, जो दलित साहित्य विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुए। उनसे प्रभावित होकर हिन्दी के कुछ कथाकारों ने दलित चेतना को अपनी कहानी का केन्द्र बिन्दु बनाया। इस दलित चेतनावादी कहानियों का संपादन डॉ. गिरीराज शरण अग्रवाल ने 'दलित जीवन की कहानियाँ' पुस्तक रूप में प्रकाशित की है - "जिस देश की आधी मानवता अपमान से पीडित हो, उस देश में स्वाभिमान से यह कह सकनेवाला साहित्य की हम अपमान पीडित मानवता के लिए अपने को समर्पित करते हैं, मराठी के दलित साहित्य के अलावा दूसरा नहीं है।"[1]

### 1.6.5 दलित कहानियाँ

दलित कहानियों में दलित लोगों के मानसिकता की अभिव्यक्ति हुई है। इन्हें बहुत सारे अत्याचारों को सहना पडता है फिर भी सरकार उनकी सहायता के लिए तैयार नहीं होती। वे अपने संघर्ष को ज़ारी रखते हैं और अन्त में प्रतिरोध करते हैं। दलित साहित्य दरअसल दलितों के सांस्कृतिक उत्थान एवं आत्म पहचान का ही परिणाम था। दलितों ने पहचान लिया कि युग युगों से उनके साथ छल किया जा रहा था, जाति के नाम पर। उन्हें विरासत के रूप में स्विकार करने के लिए कुछ भी उन्हें नहीं थे। सबके सब सवर्णों द्वारा अपनी सुविधा के लिए लिखी गई सामग्रियाँ हैं। अतः वे इन सबका निषेध

---

1. हिन्दी भाषा तथा साहित्य अनुशीलन - डॉ. ज्योति मुगल पाण्डेय - पृ. 101

करते हुए अपना सब कुछ खोप निकालने तथा गढ़ लेने के प्रयत्न में जुड गए है। दलित साहित्य अपनी अस्मिता का पहचान का साहित्य है, जिसके ज़रिए जीवन के विभिन्न मुद्दों को लेकर वे अपनी जो मानसिकता है उसमें संप्रेषित कर रहे हैं। इसलिए संवेदन की दृष्टि से यह बिलकुल अलग है। इसमें अनुभव की तीव्रता है, ईमानदारी है, प्रतिरोध एवं प्रतिशोध की भावना है। भविष्य को लेकर सुस्पष्ट चिन्तन है। दलित कहानिकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से इस मानसिकता का पर्दाफाश किया कराती है।

हिन्दी के दलित कहानिकारों में श्री ओमप्रकाश वाल्मीकि ही ऐसे कथाकार है जिन्होंने अब अपनी पहचान स्थापित कर ली है। उनके अब तक दो कथा संग्रह 'सलाम' तथा 'घुरा पैठिए' प्रकाशित हो चुके हैं। लघुकथाओं में मुंशीजी का 'गिलास' आदि भी चर्चित रचनाएँ हैं। इन कथाओं में किसी भी वाद-विवाद से हटकर तथा किसी जाति वर्ण के प्रति घृणा रखते हुए दलित जीवन की विद्रूपता का जितना प्रभावशाली चित्रण है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। बी.एल. नय्यर की कहानी 'चतुरी चमार की चार' सवर्ण जातियों के मन में बसी दलित जातियों के प्रति घृणा को नंगा करती है। राजेन्द्र लहरिया की कहानी 'यहाँ कुछ लोग थे', डॉ. प्रेमशंकर की कहानी 'बित्तेभर ज़मीन' आत्मबोध की कथा है। ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'पच्चीस चौका डेढ सौ' में कहानीकार ने युग-युगों से हो रहे अशिक्षित जनसमुदाय के शोषण की अभिव्यक्ति की है। मोहनदास नैमिशराय की कहानी 'अपना गाँव', कबूतरी नामक दलित युवती की कथा प्रस्तुत करते हुए ठाकुरों के अत्याचारों का पर्दाफाश करती है। जयप्रकाश कर्दम की कहानी 'नोबार' जाति हीनता की दुहाई देनेवालों की पोल खोल देनेवाली है। कुसुम वियोगी की 'अंतिम बयान' और कुसुम मेघवाल की 'अंगारा' कहानियाँ अलग किस्म की कहानियाँ थी।

### 1.6.6 दलित कहानियों की विशेषताएँ

दलित कहानियों की सबसे बडी विशेषता यह है कि एक ओर वे अपने मन की इच्छा को साबित कर लेती है, तो दूसरी ओर गैर दलित मानसिकता को चुनौती भी देती है। वे अन्याय, अत्याचार, अपमान के खिलाफ संघर्ष करके अपने को विजयी देखना चाहती हैं। वे और भी पराजय को स्वीकारने की स्थिति में नहीं है। युग युगों से वे पराजय की कडवाहट को भोगते आए हैं। अब और भोगने के लिए वे तैयार नहीं हैं। अब वे विजयी होना चाहते हैं। इज्जत के साथ जीना चाहते हैं। इस प्रकार समकालीन दलित कहानियाँ दलितों की इज्जत, अस्मिता एवं सांस्कृतिक पहचान का दस्तावेज है। हिन्दी दलित साहित्य के प्रतिष्ठित लेखकों में श्रद्धेय माता प्रसाद, डॉ. जयप्रकाश कर्दम, श्री मोहनदास, नैमिशराय, डॉ. श्यौराज सिंह, श्रीमती रमणिका गुप्ता, डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, डॉ. दयानन्द बटोही आदि प्रमुख दलित लेखक है।

डॉ. मैनेजर पाण्डेय ने भी अपने एक साक्षात्कार में कहा है कि - "सच्चा दलित साहित्य वही होगा जो दलितों के बारे में दलित लिखेंगे। अपने समुदाय के जीवन के यथार्थ और अनुभवों के बारे में कोई दलित लिखता है तो उसी दृष्टि में जो आग, चित्रों में जो आभा और भाषा में जो ऊर्जा होती है, वह गैर-दलितों के द्वारा दलितों के बारे में लिखे गये साहित्य में नहीं होती।"[1]

प्रेमचंद से लेकर उत्तर शती तक के कहानीकारों ने दलित चेतना को अपने साहित्य में उभारने की भरसक कोशिश की है। अब तक लिखे दलित साहित्य पर गैर कहे तो दलित कहानीकारों ने अपने साथ तथा अपनी जाति एवं वर्ग के साथ उच्च वर्णों द्वारा किए शोषण के इतिहास को स्वानुभूति के आधार पर शब्द बद्ध करने का प्रयास

---

1. दलित साहित्य के प्रतिमान - डॉ. एन. सिंह - पृ. 295

किया है। आज दलित कहानी में पिछडी जाति तथा जनजाति के जीवन का चित्रण सहानुभूतिपूर्वक नहीं, बल्कि सम्मानजनक रूप में हो रहा है। हाशिए के लोग ही दलित साहित्य का केन्द्र बिन्दु है। अतः सामाजिक परिवर्तन का पक्षधर दलित कहानी कहीं न कहीं समाज में समानता लाना चाहती है।

## 1.7 आदिवासी विमर्श कहानियों में

इक्कीसवीं सदी के कथा साहित्य में आदिवासी जीवन का चित्रण धीरे-धीरे अपनी जगह बना रहा है। भारतीय स्वाधीनता के पचपन साल के बाद देश में दस करोड में ज़्यादा ऐसा अनावश्यक लोग है, जिन्हें संवैधानिक अधिकार भी प्राप्त नहीं हुए हैं। यहाँ अभी भी बावन करोड लोग निरक्षर है, तीस करोड से अधिक लोग गरीबी रेखा के नीचे हैं। संवैधानिक सुरक्षा के बावजूद भी महिलाओं, दलितों, बच्चों, एवं बूढ़ों के साथ अमानवीय व्यवहार होता है। संघर्ष के इस दौर में अब जनजातियों को कहीं पीछे धकेला जा रहा है। वे आदि बाशिदें हैं और उन्हीं को नागरिक अधिकारों से वंचित करके समाज से फेंकने की साजिश हो रही है। इनमें इनकी संपत्ति जिसमें जंगल पानी आदि शामिल है, छीन ली जाती है। सत्ता, प्रतिष्ठान, पुलिस आदि इनके साथ अमानवीय व्यवहार करते हैं।

### 1.7.1 आदिवासी

आदि शब्द का अर्थ है आरंभ और वासी का रहनेवाला निवासी। आदिवासी शब्द का अर्थ है, किसी क्षेत्र का मूल निवासी, जो आदिकाल से किसी स्थान विशेष में रहते चले आ रहे हैं। आदिम मनुष्य या आदिवासियों के पूर्वज गुफाओं में रहते थे, शिकार करते फल फूल खाते, जीवन याजन करते थे। धीरे-धीरे मानव में विकास की इच्छा प्रकट हुई। विकास के रास्ते में मानव में बहुत कुछ बदलाव आया। रीति-रिवाज़ खान-पान आदि सब कुछ अपने विश्वासों और परंपराओं को अपने हाथ में सुरक्षित

रखकर पहाडों वनों में रहनेवाले मनुष्य समूह को हम आदिवासी कह सकते हैं। उनके इन विश्वासों और परंपराओं का आविर्भाव का कारण भौतिक वातावरण है।

ये प्राचीन संस्कृति की विशेषताओं को सुरक्षित रखकर विशेष प्रकार से सामाजिक ढाँचे से जीनेवाले हैं। पूरी तरह से वनों और पहाडों से आश्रित, आदिवासी नगर जीवियों के लिए कौतुक है। पर इनका संसार तो जंगल है। बाह्य संसार की जानकारी इन्हें बहुत कम है। यदि मानव संस्कृति की खोज करें तो आदिवासियों की रंगीन दुनिया में इसकी जडें को पाया जा सकता है।

### 1.7.2 आदिवासी जीवन पर आधारित कहानियाँ

आदिवासी अब समझने लगे हैं कि उन्हें हर प्रकार से भाषा साहित्य, संस्कृति जंगल, संपदा से अलग किया जा रहा है। उनको विनष्ट किया जा रहा है। आज अभिजात्य साहित्य के बाहर एक बहुत बडा आदिवासी समाज जो बरसों से अपने अधिकारों से वंचित था। जिस समाजकी ओर अभी तक साहित्य की नज़र भी नहीं गई। किन्तु आज साहित्य में यह स्वर मुखर हो चुका है। हिन्दी में आदिवासी जीवन पर कुछ छुट-पुट कहानियों की रचना हुई है। राधाकृष्ण लाल बाबु ने संताल परगना की पृष्ठभूमि पर 'गेंद और गोल' कहानी, डॉ. श्रवण कुमार गोस्वामी की 'जिस दिए में तेल नहीं' तथा 'चाय-पानी' जैसे आदिवासी प्रधान कहानियाँ लिखी। डॉ. वासुदेव जी का 'इस जंगल के लोग' कहानी संकलन भी आदिवासी जीवन पर आधारित कहानियों की श्रेणी में गिना जाता है। आदिवासी जीवन पर केन्द्रित कहानियाँ दलित विमर्श के पश्चात ही प्रारंभ होती हैं।

आज आदिवासी जीवन केंद्रित-कहानियों में प्रगति दिखाई देती है। संजीव, रमणिका गुप्ता, हरिहर वैष्णव, लक्ष्मीनारायण पयोधि, रोज केरकट्यजी, अश्विनी कुमार पंकज, कालेश्वर, मेहरुन्निसा परवेज़, राकेश कुमार सिंह, पुनी सिन्नजी, आदि कहानीकार

आदिवासी जीवन के विविध पक्षों को आधार बनाकर कहानियाँ लिख रहे हैं। कहानी संग्रह के रूप में लक्ष्मीनारायण पयोधि जी का कहानी संग्रह 'संबन्धों की एवज में' (1992) में प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह की 'साहूकार' कहानी आदिवासियों के शोषण की महागाथा है। कहानी का मुख्य पात्र खेती के लिए साहूकार से ऋणा लेता है। ऋणा न चुकाने पर साहूकार ज़मीन नाम लिखाने की बात करता है, किंतु वह ज़मीन को अपनी माँ समझता है। ज़मीन अपने न देकर अपनी बेटी को साहूकार के पास गिरवी रखने को तैयार हो जाता है। कुछ इसी भाव-भूमि की एक ओर कहानी है 'महुए के फूल'। इसमें कहानीकार ने कहानी की नायिका झिट की सुंदर महुए के गदराए रसीले फूल में आरोपित किया है। महुए के फूल, जो कि आदिवासियों के आर्थिक जीवन में केन्द्रित तत्व की भूमिका निभाता है। इस कहानी में आदिवासियों के आर्थिक, सामाजिक, दैहिक और सांस्कृतिक शोषण को बहुत सलीके के साथ परत-दर उघाडने की कोशिश की गई है। इस संकलन में पयोधि जी की कहानियाँ आदिवासी अंचलों के परंपरागत-सामाजिक ढांचे में आ रहे परिवर्तनों को रेखांकित करती है।

संजीव ने आदिवासी जीवन पर आधारित कहानियों की रचना की। उनकी 'प्रेममुक्ति', 'टीस' तथा 'आपरेशन जोनाकी' आदिवासी जीवन पर आधारित कहानियाँ हैं। 'टीस' कहानी आदिवासी जीवन के संघर्ष, शोषण और समस्याओं को लेकर लिखी गई कहानी है। इस कहानी में संजीव आदिवासी जीवन की त्रासदी को स्पष्ट करते हैं। 'अपराध' कहानी एक आदिवासी भाई-बहन की कहानी है। बहन पढ़ाई कर डाक्टर बनना चाहती है। लेकिन गरीब आदिवासियों पर हो रहे अत्याचारों के कारण नक्सलवादी बन उन लोगों को मारते हैं जो वास्तविक रूप से अपराधी है। 'आपरेशन जोनाकी' नक्सलवाला आंदोलन की पृष्ठ भूमि पर लिखा कहानी है।

---

1. साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जन-जीवन - डॉ. श्यामराव राठोड - पृ. 96

बस्तर के आदिवासी जीवन पर आधारित हरिहर वैष्णव का कहानी संग्रह (1997) 'मोहभंग' आदिवासियों के जीवन के महत्वपूर्ण पहलुओं, गरीबी, बेबसी और लाचारी को स्पष्ट करती है। हरिहर वैष्णव स्वयं इस अंचल के निवासी है तथा उनकी अनुभूतियाँ एक द्रष्टा और भोक्ता की नस-नस से परिचित है। उनकी कहानियों में एक-एक कर उघाडते हैं। इनकी 'सोनसाय का गुस्सा' कहानी में आदिवासियों के शोषण की कहानी है, उनकी ज़मीन को किस प्रकार लोग हडपते हैं। 'मोहभंग' एक आदिवासी युवक की कहानी है जो बडे संघर्षों से शिक्षा प्राप्त कर तहसीलदार तथा अनेक उच्च पदों को प्राप्त कर राजनेता, मंत्री बनता है। किन्तु आदिवासियों के अभावात्मक जीवन को देखकर राजनीति से भी मोहभंग हो जाता है तथा गाँव को लौटता है। तगादा कहानी में सरकारी कर्मचारियों से ऋणा न लौटाने के कारण आदिवासियों का आर्थिक, सामाजिक और नैतिक शोषण किस प्रकार करते हैं, इस कहानी में दर्शाया गया है। दिशाहारा कहानी में नारी-देह शोषण की मज़बूरी को स्पष्ट किया गया है।

मेहरुन्निसा परवेज़ आदिवासी बहुल क्षेत्र बिस्तर में पली बढ़ी है। उन्होंने बिस्तर के जगदलपुर में रहकर आपने काफी साहित्य रचा है। परवेज़ के जनजातियों के आर्थिक सामाजिक जीवन, उनके विभिन्न सांस्कृतिक स्तर तथा क्रिया कलापों के बहुत नज़दीक से देखा परखा है। उनके कहानी संग्रह 'मेरी बस्तर की कहानियाँ' (2006) में आदिवासी जीवन पर कई कहानियाँ है, जिसमें 'कानीबाट', 'टोना', 'ओढ़ना', 'जंगली हिरनी' प्रमुख कहानियाँ है। इन कहानियों में आदिवासी जीवन के परिवेश के विभिन्न संस्कार, उनके खेल, घोटुल गृह का चित्रण, धार्मिक विश्वास, जादू-टोना, रीति रिवाज़ों आदि का सुंदर चित्रण मिलता है। उनकी कहानियों में आदिवासियों के संस्कार विस्तार से वर्णन मिलता है। 'कानीबार' कहानी में 'नामकरण संस्कार', 'मृतक संस्कार', 'जंगली हिरनी' कहानी में 'विवाह संस्कार', घोटुल तथा बस्तर के आदिवासी जीवन के विविध आयामों का चित्रण मिलता है।

राकेश कुमार सिंह नई पीढ़ी के प्रखर कथाकार है, जो स्वयं आदिवासी क्षेत्र पलायू के निवासी है। उन्होंने आदिवासी जीवन को बहुत निकट से देखा है। उनके आदिवासी जीवन केंद्रित कहानी संग्रह 'जोडा धारल का रूप कथा' (2006) तथा 'महुआ मादल' और 'अंधेरा' (2007) में झारखंड के आदिवासी जीवन से संबन्धित विभिन्न पहलुओं को समेटे दुःख, दैन्य, जीवन संघर्षों को इन कहानियों में इस प्रमाणिकता के साथ उकेरा है कि इनसे गुज़रते हुए बदलते समय की आहटों को साफ-साफ सुना जा सकता है। 'जोडा धारल का रूपकथा' कहानी में जबरदस्ती आदिवासियों की ज़मीन हडपने की कथा है। कहानीकार दार्शनिक अंदाज में जमीन को स्पष्ट करता है। महुआ मांदल और अंधेरा में बंधुआ मज़दूरी, उपेक्षित शैक्षिक वर्ग, शिक्षा में भ्रष्टाचार पलायू के जंगलों की कटाई, जंगलों से तथा अपने घरों से उजडनों की कहानियाँ है। राकेशकुमार लिखते हैं - "रेल यहाँ आदमियों के लिए नहीं चलती। चलती है झारखंड को दुहने के लिए। सारा समय मालगाडियाँ छड़-छड़ाती रहती है पटरियाँ पर।"[1]

रोजकेरकट्टा जी का कहानी संग्रह 'पगहा जोरी-जोरी रे घाटो' (2009) झारखंड के आदिवासी जीवन का संस्मरणात्मक कथात्मक वृत्तांत है। इस कहानी संग्रह में सोलह कहानियाँ है जो आदिवासी समाज और संस्कृति को आदिवासी शैली में चित्रित किया गया है। इस संग्रह की मैना, केराबांझी, भंवरे, गधे, घना लोहार का, महुआ गिरे सगर राति, कहानियों में स्त्री प्रतिकार मुखरित हुआ है। इस कहानी संग्रह में आदिवासी समाज की संस्कृति को चित्रित किया गया है।

कालेश्वर स्वयं आदिवासी है, उनके दो कहानी संकलन 'सलाम भाटू' (2009) तथा 'मैं जीती हूँ' (2011) आदिवासी जीवन पर आधारित उनके सामाजिक, सांस्कृतिक,

---

1. भारतवाणी - जुलाई 2013, लेखक लाल बहदूर शास्त्री - पृ. 19

सभी पक्षों को रखती है। इनके कहानियों में आदिवासियों के विस्थापन का दर्द है। लालदस्ते की असरदार मौजूदगी के निशान भी देखने को मिलते हैं। इन कहानियों में परिवेशगत चित्रण, जंगल, नदी, पहाड, नदी-नालों, खेतों के अस्तित्व पर मँडरा रहे खानों, कारखानों के बहुधंधी दवावों की आंकने की भी कोशिश की गई है। इन कहानियाँ, दृश्यात्मक चित्र प्रस्तुत करती है, अखडे के दृश्य, बाज़ार, आदिवासियों के नृत्य, गीत, त्योहार, तथा वह किस प्रकार जीवन की कठिनाइयों में मस्त रहते हैं, इसका विवरण इन कहानियों में हुआ है। ग्रामीण तथा नगरीय परिवेश में आदिवासी जीवन का चित्रण अश्विनी कुमार पंकज जी ने अपने कहानी संग्रह - 'पेनाल्टी कार्नर' (2009) तथा 'इस सदी के असुर' (2010) द्वारा चित्रण किया है। नेता, अधिकारी वर्ग किस प्रकार मिलकर आदिवासियों का शोषण करते हैं, इसको बखूबी पंकज जी ने अपनी कहानियों में उतारा है। रणेंद्र जी के कहानी संग्रह रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ में आदिवासी भूभाग से संबन्ध तथा गरीबी अशिक्षा और बदहाली के घने जंगलों में व्यवस्था के हिंसक नरभक्षी मनमाना शिकार आदि का चित्रण है। रणेंड जी की इस संग्रह की कहानियाँ आदिवासी जीवन की कठोरता, संघर्ष की वास्तविकता का चित्रण भी कराती है।

रमणिका गुप्ता जी ने छोटा नागपुर की वादियों, जंगलों में आदिवासी महिलाओं की स्थिति से बखूबी परिचित रचनाकार है। इन्होंने साक्षात जीवन में आंदोलन का सहारा लिया और साहित्य में भी आंदोलनकारी रूप को निखारा है। दलित तथा आदिवासी जीवन पर उनका कहानी संग्रह 'बहुजुठाई' (2010) में आदिवासी स्त्रियों के शोषण के विविध रूपों की चर्चा अपनी कहानियों में की है, रमणिका गुप्ता आदिवासी स्त्रियों के प्रति केवल सहानुभूति की दृष्टि से ही नहीं देखती उन्हें संघर्ष करना भी सिखाती है। इनकी कहानियों में प्यारी, परबतिया, चमेली जैसी स्त्रियाँ अपने अधिकारों के लिए लड़ती

---

1. साठोत्तर हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी जन-जीवन - डॉ. श्यामराव राठोड - पृ. 103-104

है। डॉ. जोराम यालाम नाबाम का कहानी संग्रह 'साक्षी है पीपल' में अरुणाचल प्रदेश की याशी जनजाति के आदिवासी नारी शोषण को अपनी कहानियों में स्पष्ट किया है। अशिक्षि नारियों का शोषण, उनके अशिक्षित होने का लाभ उठान आदि इन कहानियों से स्पष्ट होता है।

साहित्य समाज का दर्पण है। चाहे वह समाज विदेशी हो या भारतीय। साहित्य में आदिवासी समाज और उनका जीवन अब तक उपेक्षित ही है। कई दशकों से हिन्दी में कम अपनी मातृभाषा में आदिवासी कहानीकार सक्षम ढंग से लेखन कर रहे हैं। हिन्दी में जो कहानी संग्रह आदिवासियों के ऊपर लिखे गए हैं, वे हिन्दी में 'आदिवासी अस्मिता का विकास' है।

## 1.8 पारिस्थितिक विमर्श और समकालीन हिन्दी कहानी

### 1.8.1 प्रकृति और मानव

मानव और प्रकृति का घनिष्ठ संबन्ध है। आदि मानव मन प्रकृति से मिल जुलकर प्रकृति का हिस्सा बनकर जीवन बीता रहा था। उसकी आजीविका के लिए अवश्यक सारी चीज़े प्रकृति देती रही थी। इसलिए आदिमानव प्रकृति के प्रत्येक अंग की पूजा करता था। वह बिलकुल प्राकृतिक था। किन्तु कालान्तर में धीरे-धीरे मानव प्रकृति से दूर होता चला गया। आधुनिक युग में आते आते औद्योगिक प्रकृति में भूमि का नाश होने लगा। 1980 के आसपास आर्थिक क्षेत्र में उदारीकरण ओर वैश्वीकरण की रफ्तार बढने के साथ साथ परिस्थिति का नारा भी होने लगे धीरे-धीरे मनुष्य ने आधुनिक सभ्यता के बीच अपनी पुरातन सरल प्राकृतिक जीव पद्धति को खो लिया। इसके बारे शुक्लजी ने यों लिखा कि - "हम पेड-पौधे और पशु-पक्षियों से संबन्ध तोडकर नगरों में आ बसे पर उनके बिना रहा नहीं जाता। हमारा साथ उनसे भी छोडने नहीं बनता। कबूतर हमारे

घर के छज्जो में सुख-सुख से सोते हैं, गैरे हमारे घर के भीतर आ बैठते है।"[1] वस्तुतः आज के इस मशीनी युग के प्रदूषित वातावरण में आधुनिक मानव को प्रकृति के अंचल में जाने की जितनी आवश्यकता है उतनी अतीत के मानव को नहीं थी। अपने स्वार्थ के लिए ही मनुष्य प्रकृति का विनाश कर रहा है।

### 1.8.2 प्रकृति : विनाश और बचाव

समकालीन युग में प्रकृति हमारी चर्चाओं का केन्द्र विषय बन गयी है। आज प्रकृति का विभिन्न प्रकार से प्रदूषण विनाश एवं शोषण हो रहा है। आज मनुष्य वर्ग को बचाने के लिए हमें सबसे पहले प्रकृति को बचाना है। इसलिए प्रकृति और मनुष्य के पारस्परिक संबन्ध पर विचार विमर्श चल रहा है। यह परिस्थिति आज साहित्य का मुख्य विषय बन चुका है। पारिस्थितिक प्रदूषण की समस्या वर्तमान संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर व्याप्त है। यह केवल भारत की समस्या नहीं है, बल्कि पूरे विश्व की समस्या है। संपूर्ण मानवराशि के अस्तित्व की समस्या है।

### 1.8.3 पर्यावरण का संकट

समकालीन साहित्य का मुख्य स्वर प्रतिरोध का है। संतुलित जीवन को बिगडनेवाले जो भी भीषण और उत्पीडन के तत्व हो उनका विरोध खुले तौर पर समकालीन साहित्य करता आ रहा है। पर्यावरण का संकट आज विश्व की जनता के ऊपर आ गयी सबसे बडी विपत्ती है। विकास के लिए प्रकृति के अतिदारुण दोहन-शोषण दुनिया भर हो रहा है। इसका एक वजह तो जनसंख्या वृद्धि है। जहाँ जनसंख्या बढेगी तो प्रकृति का शोषण भी ज्यादा होगा ही। भारत जैसे देश में इस नजरिए से पर्यावरण संकट बहुत भयानक रूप धारण कर रहा है।

---

1. साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन - के. वनजा - पृ. 132

पर्यावरण संकट मुख्यतः जैववैविध्यों का संकट और सामाजिक संकट के रूप में दृश्यमान है। औद्योगीकरण के बावजूद नयी-नयी कृषि योजनाएँ एवं नये उद्योगों के आरंभ के लिए जंगलों एवं कृषि भूमियों को तहस नहस करने से संसार में जन वैविध्य के अधिकांश भाग गायब हो गये। प्राकृतिक संतुलन भी नुक्सान में पड गया। अनावृष्टि, सूखा, बढता भौमताप जैसे जलवायु में आये परिवर्तन जैव वैविध्य के नाश और पेट्रोल, कोयला आदि के सीमातीत प्रयोग की उपज है। दूसरी ओर बडी-बडी विकास योजनाओं से विस्थापित होनेवाली समाज के निचले स्तर की जनता की आवासीय व्यवस्था, नौकरी, भूख आदि है। इस प्रकार के पर्यावरण संकट को सुलझाने के लिए व्यक्तिगत संगठित और सरकारी प्रयत्न राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं, बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी बडे पैमाने पर चल रहा है। अल्पकालिक सुख के लिए आयोजित ज्यातातर योजनाएँ अगामी पीढी के सर्वनाश की वजह बनने की संभावनाएँ हैं। इसलिए आजकल साहित्यकार परिस्थिति से सजग है।

### 1.8.4 समकालीन कहानी में पारिस्थितिक सजगता

समकालीन हिन्दी कहानी में साहित्य के अन्य सशक्त विधाओं के समान पारिस्थितिक सजगता अभिव्यक्त है। साहित्य में कई कहानियों में प्रकृति के जीवजन्तुओं के शोषण प्रकृति एवं मनुष्य के बीच का संबन्ध पर्यावरण संकट के मूलकारण, जनसंख्या आदि पर बहुत सजीदगी से विचार किया गया है।

छायावादी युग में वैज्ञानिक आविष्कारों से मनुष्य की ज़रूरतों के लिए थोडी-थोडी विकास योजनाएँ ही शुरू हुई थी। प्रकृति पर उतना कठोर आघात नहीं हुआ था। प्रसादजी ने कामयानी में इसका उल्लेख भी किया था। लेकिन समकालीन संदर्भ में मनुष्य की उपयोगवृत्ति इतनी बढ गयी कि वह धरती का अन्धा धुन्ध दोहन कर रही है। प्रसिद्ध

पर्यावरणविद और इकोलॉजी पत्रिका के संपादक इडवेर्ड गोल्डस्मिथ ने कहा - "धरती पर तीसरा विश्वयुद्ध आरंभ हो चुका है। यह युद्ध प्रकृति के खिलाफ है। आज हम वनस्पति जगत की मृत्यु देख रहे हैं।"[1]

समकालीन हिन्दी कहानी में पेड और जगलों को नष्ट करने की समस्या को बहुत गंभीरता से लिया गया है। परिस्थिति संबन्धी कई आन्दोलन अब चलता है। सुंदरलाल, बहुगणा, मेघा पटेकर जैसे प्रकृति स्नेही गाँधीजी की विचार-धारा को ग्रहण किए हुए है। उनके नेतृत्व में प्रत्येक आंदोलन सफल एवं सुदृढ़ रूप धारण करता है।

इस दृष्टि से राजेश जोशी की कहानी 'कपिल का पेड' एक विचारणीय कहानी है। इस कहानी में मनुष्य और प्रकृति का पारस्परिकता को बलवती रूप का बखान हुआ है। इस कहानी से यही संदेश मिलता है कि मनुष्य एवं पारिस्थिति कितने अन्योन्याश्रित है। हमारी संवेदनाएँ इससे निर्मित है। पेडों को रोपनेवाला या बचानेवाला ही अपने और दूसरों को प्यार कर सकता है। पेडों का ज़िन्दा रहना मनुष्य के लिए ज़रूरी है। राजेश जोशी की 'मैं हवा पानी परिन्दा कुछ नहीं' कहानी भी पर्यावरण संकट को अभिव्यक्त करता है। विकास के नाम पर हम जंगलों एवं नदियों का शोषण करते हैं, तब जंगल के पशु-पक्षियों की भी बडी संख्या में हानि हो रही है। राकेश के दोनों कहानियों में प्रकृति और मनुष्य की वर्तमान स्थिति की गहराई को रेखांकित किया गया है। एक कहानी में पेड बनकर दूसरे में पक्षी बनकर वे सचमुच प्रकृति में मनुष्य की अनन्यता एवं प्रकृति के प्रति उसका अनिवार्य प्रेम दोनों की उद्‌घोषणा कर रहे हैं।

स्वयं प्रकाश की कहानी 'बली' परिस्थिति की दृष्टि से उल्लेखनीय है। इस कहानी में एक लड़की की जिन्दगी के जरिए गाँव के पर्यावरण में आये हुए शहरीय जीवन

---

1. साहित्य का परिस्थितिक दर्शन - इडवेर्ड गोल्डस्मिथ - पृ. 101

के प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है। दोनों के शोषण का सहज वर्णन इस कहानी में प्राप्त है। मनुष्य आधुनिकता के नाम पर नैसर्गिक गुणों को भूल जाता है और पहाडी आरोहण करनेवाले पहाड़ को तोड़ते हैं और उनपर चढ़ते हैं। मनुष्य आधुनिक साधनों का उपयोग करके नैसर्गिक गुणों को मार रहा है। संजीव द्वारा रचित 'आरोहण' कहानी में पहाडी प्रदेशों की सुंदर प्रकृति का वर्णन किया है।

'कही दूर जब दिन ढल जाए' बटरोही की बहुत मर्मस्पर्शी कहानी है। प्यार जैसा मूल्य जो नष्ट हो रहा है, इस कहानी में इसका खतरा उद्‌घाटित करती है। आज की बाज़ारू संस्कृति में इस कहानी का महत्व विचारणीय है। हमारे जीवन-से सारी नैसर्गिकता नष्ट हो गयी। शहरी वातावरण ने मनुष्य को स्वार्थों तथा औपचारिक बना दिया। इस कहानी में कहानीकार प्यार का महत्व एवं ग्रामीण संस्कृति की खासियत पर प्रकाश डालता है। रवीन्द्र कालिया की कहानी 'सुन्दरी' जानवर एवं मनुष्य के बीच सुदृढ़ संबन्ध का बयान करती है।

चित्रा मुद्‌गल की दो कहानियाँ 'जिनावर' और 'जंगल' परिस्थिति से संबन्धित है। 'जिनावर' कहानी में मनुष्य और जानवर के बीच गहरी संवेदना को उद्‌घाटित करता है। 'जंगल' बाल सुलभ जिज्ञासा एवं बालमनोविज्ञान पर बल देनेवाली कहानी है। इस कहानी में जानवरों से मनुष्य का प्रेम तथा उन्हें स्वतंत्र छोड़ने की आवश्यकता पर ज्यादा बल दिया गया हैं।

आज परिस्थिति की रक्षा मनुष्य की सबसे बडी आवश्यकता बन गई है। इसका कारण प्रकृति हमारी जिन्दगी की संचालक शक्ति है। उसका नारा हमारा नाश है। उसके खिलाफ कई समाज शास्त्री आवाज़ उठाते हैं। लेकिन प्रतिक्रियाविहीन समकालीन समाज पारिस्थितिक आपत्तियों के सम्मुख निष्क्रिय उपस्थित है। इस निष्क्रियता में

परिणित करने और पारिस्थितिक नाश का अवबोध देने में कई कहानिकारों ने अपने इस समस्या पर विचार किया है। साहित्यकार की कलम की लडाई कभी भी खत्म नहीं होती। हमारे पारिस्थितिक संतुलन पर आये हुए जोखिम को पहचानकर उसे अभिव्यक्त करने में हिन्दी के कहानीकार कामयाब हुए हैं। इसके साथ कहानी की पारिस्थितिवाद पर आधारित नूतन धारा कहानी के विकास को भी घोषित करती है। यह कहानी का सशक्त रूप बन गया है।

## 1.9 भूमंडलीकरण और समकालीन कहानी

इक्कीसवीं सदी के आरंभ के साथ ही मानव समाज विकास के एक नवीनतम युग में पदार्पण करता है, जिसे भूमंडलीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी का युग कहा जा रहा है। शब्दकोश में 'ग्लोब' या 'भूमंडल' शब्द पहले से है। लेकिन ग्लोबलाइज़ेशन का प्रयोग सन् 1960 के आस पास हुआ है। भूमंडलीकरण की प्रेरक प्रभावक बहुराष्ट्रिय कंपनियाँ है जो सारी धरती को अपना बाज़ार मानती है। यह अवधारणा ऊपर से बहुत मोहक और मानवीय लगती है और विश्व बैंक जैसी विश्व संस्थाओं ने भूमंडलीकरण को सामाजिक न्याय की कुंजी कहकर इसे गौरवान्वित भी किया है।

### 1.9.1 समकालीन कहानी में भूमंडलीकरण की अभिव्यक्ति

आज की तेज़ रफ्तारवाली जिन्दगी, सूचनाओं के संजाल, पूँजी और तकनीक का मानव जीवन में हस्ताक्षेप, संवेदनाहीन संबन्ध, उपभोक्तावाद के उपद्रव, भूमंडलीकरण का मलवा आदि सबने मिलकर जीवन में गडबड पैदा किया है। युवा रचनाकार इन परिस्थितियों को समझने का प्रयास कर रहा है। भूमंडलीकृत समय ने जिन्दगी के ढाँचे को परिवर्तित कर दिया है। आज के कहानीकार यथार्थ को सामना करते हैं तथा उसे रचनात्मक ढंग से अभिव्यक्त करते हैं। कुमार अंबुज की कहानी 'मैं तुम्हारा कोई काम

नहीं करना चाहता' यथार्थ से युक्त कहानी है। इस कहानी का नायक वैश्वीकरण और उपभोक्तावादवाले समय का नायक है जो इस नई व्यवस्था की चाल समझता है। आदमी की पूँजी और उत्पाद में उलझाकर अपना काम निकालना चाहता है। इस कहानी में पूँजी और उपभोक्तावाद का यथार्थ आज के जीवन को किस प्रकार जकडे हुए है। कहानीकार का दुःख इस यथार्थ के संदर्भ में यह है कि प्रतिरोध का तरीका अपनाते हुए वह यथार्थ की रचना की ओर झुक जाता है। आज का यथार्थ बहु आयामी है। समकालीन कहानीकार स्त्रीजीवन, आम मनुष्य, मध्यवर्गीय जीवन तथा बालजीवन का यथार्थ का परिदृश्य बनाकर कहानी के रूप में चित्रित करते हैं।

### 1.9.2 समकालीन कहानी में समय का अंतर्विरोध

समकालीन कहानी में समय का अंतर्विरोध उजागर हुआ है। इस समय एक ओर विज्ञान और टेक्नालॉजी का चरम विकास है। मोबाइल, इंटरनेट, नैनो टेक्नालॉजी, पृथ्वी से इधर दूसरे ग्रहों पर जीवन बसाने की तैयारी है तो दूसरी ओर आत्मसंघर्ष, जीवन काटने की विवशता, धर्मांधता, अंधविश्वास, हर क्षण सतानेवाला भय और असुरक्षा है। आज के कहानीकार समय की पहचान करते हुए उसे अपने-अपने ढंग से प्रस्तुत करते हैं। ऊर्मिला शिरिष की कहानी 'अग्निरेखा' बिजनेस और प्रोजक्ट का विकास तथा आदिवासी जीवन का संघर्ष चित्रित है।

### 1.9.3 समकालीन कहानियों में समय की विडंबना

समकालीन कहानियों में समय की विडंबना को बखूबी उभारा गया है। मौजूदा व्यवस्था बडे सशक्त रूप में हमारे भीतर घट करती जा रही है। मानवीय और सामाजिक संबन्ध इस नई व्यवस्था तथा जीवन शैली के तहत चरमरा रहे हैं। समकालीन

---

1. हिन्दी उपन्यास का इतिहास - गोपाल राय - पृ. 220

कहानी का मूल्यांकन करते हुए विनयमोहन सिंह ने लिखा है - "साठोत्तरी पीढी की कहानियाँ किताबी विचारधाराओं से मोहभंग की कहानियाँ हैं। वे आज के नंगे बेलौस यथार्थ और वास्तविकता के सामने इतनी निःशास्त्र खडी है कि उनके दरम्यान किसी खांचे में ढली विचारधारा की समाई ही हो नहीं सकती। वे अपने समय में इतनी आबद्ध है कि उन्हें सांस लेने में भी तकलीफ हो रही है। वे समय की इसी सामंत की कहानियाँ हैं।"[1] संघर्ष और ईमानदारी आज की कहानी में अभिव्यंजित है। वह जीवन की विडंबना की ओर संकेत करता है। प्रत्यक्षा की कहानी 'दिलनवाज तुम बहुत अच्छी हो' और कुणाल सिंह की 'रोमियो जूलियट' और 'अंधेरा' में वर्तमान समय के बीच मानवीय संबन्ध चित्रित है। आज की कहानी संबन्धों के बीच भी अकेले पड जानेवाले व्यक्ति को प्रभावी ढंग से चित्रित करती है। संजय कुंदन की कहानी 'बाउंसर' में नये समय के एक अन्य पहलू की पहचान की गई है। समय बदलने के साथ-साथ नौकरी के नए-नए रूप भी सामने आ रहे हैं। इस कहानी का नायक गोपी गाँव से नौकरी की खोज मे दिल्ली आता है। और उसे नौकरी भी मिलती है। शहर में आकर उसे कई रूप में बदलना होता है। यहाँ आदमी-आदमी में फर्क है। फिर भी कुछ ही दिनों में वह नौकरी गवा बैठता है। इस कहानी में मनुष्य मनुष्य में भेद उत्पन्न करते, संबन्धों में दरार डालते इस नये समय पर संबन्ध और संवेदना भारी पड जाती है।

शर्मिला बोहरा जलान की कहानी 'कार्न-सूप' विदेशी तर्ज पर बने अत्याधुनिक डिज़ाइन के मॉल के इर्द-गिर्द धूमती है। बाजार का यह नया रूप बच्चे, जवान, बूढे सब मॉल की जगमगाती रोशनी के दीवाने हो रहे हैं। जैसे उधार लेकर खूब खरीददारी करता है तथा दोस्तों के सामने स्टेटस बखारता है। आज के समाज में स्टेटस बहुत ज़रूरी बन गया है। सादा जीवन अब असंभव बन गया है। पंकज मित्र की कहानी 'बिलौती' मस्ती

---

1. नया ज्ञानोदय मार्च 2008 - विनयमोहन सिंह - पृ. 25

की उधार फिकर में बिलौती जीवन का उधार से दूर रहते हैं। पर अंत में एटी एम के कडकडे नोट का जादू चढ ही जाता है। बेटे पर उपभोक्तावाद और तेज रफतार वाली जिन्दगी का नशा ऐसा चढ़ताहै कि वह अपनी जान गांवा देता है। उपभोक्तावादी मनुष्य की तकलीफ कही बढा गई है दुःख दर्द कहीं बढ गया है। इस कहानियों में आज के मनुष्य का दुःख साफ दिखाई देता है।

### 1.9.4 समकालीन कहानी में आर्थिक उदारीकरण की अभिव्यक्ति

भूमंडलीकरण के समर्थकों ने सारी धरती को बाज़ार बनाकर यही बताया है कि दुनिया में कहीं भी धन और माल के मुक्त आवगमन में पैदा होनेवाले अवरोधों को हटाने से प्राप्त होनेवाले आर्थिक भूमंडलीकरण से प्रतिस्पर्धा पैदा होता है। वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण की प्रक्रिया का आरंभ उपनिवेशवाद की प्रक्रिया के साथ ही हो चुका था। ब्रिटिश उपनिवेशवाद के रूप को भूमण्डलीकरण का पहला चरण माना जाता है। आज साहित्य और संस्कृति का एक उपभोक्ता हो रहा है। हिन्दी की समकालीन कहानियों में भूमंडलीकरण और उससे जुडे आर्थिक उदारीकरण की चिंता व्यक्त की गया है। हिन्दी कथाकारों ने यथा संभव उस अमानवीय कारण का विरोध किया जो भूमंडलीकरण के अंतरगत बढ़ता गया है। भूमंडलीकरण के प्रभाव के कारण मनुष्य वास्तविक सामाजिक चेतना के बदले मिथ्या चेतना से ग्रस्त होकर भ्रमित हो जाता है। भूमण्डलीकरण के द्वारा शोषण पर आधारित सामाजिक व्यवस्था ही स्थापित हो जाती है। वैश्वीकरण या भूमण्डलीकरण मूलतः उदारवादी आर्थिक संरचना की देन है। भारत ने भी अनेक देशों के साथ इस संरचना को स्वीकारा। जिसके चलते विश्व के सभी देशों के बीच आर्थिक व्यापार आबाधित हुआ तथा विश्व को एक ग्लोबल विल्लेज याने भूमंडली गाँव बना। इस वैश्वीकरण ने न केवल अर्थव्यवस्था बल्कि समाज, राजनीति, संस्कृति, शिक्षा एवं भाषा सभी को प्रभावित किया।

### 1.9.5 भूमण्डलीकरण के हानी-लाभ का चित्रण

यह सदी एक ओर मानव समुदाय को ऐशों-आराम की बेशुमार चीज़ें दे रही है तो दूसरी ओर उसकी तेज रफ्तार जीवन की पारंपरिक लय को भंग भी कर रही है। आज सामाजिक जीवन की भावना अदृश्य हो रही है और हर तरफ चीज़ों के नज़ारे हैं, आज के युवक पूरी तरह बाजार तंत्र से प्रभावित है। अतः इनका रहन-सहन खान-पान भाषा आदि बाज़ार से प्रभावित है। तरक्की की दौड में आज लोगों के बीच रिश्तों की गर्माहट समाप्त हुई है। रीता सिन्हा की कहानी 'ओनली टू परसेंट चलेगा' में कॉरपोरेट कल्चर के भीतर के अंधेरे की पडताल करती है। लेखिका अगाह करती है कि एक ऐसी व्यवस्था अपने जडें जमा रही है, जिसमें सच्चे और ईमानदार लोगों की कोई जगह नहीं है। भूमंडलीकरण और उत्तर औद्योगिक समाज ने युवा वर्ग के सामने एक दम नए ढंग के रोज़गार और नौकरी के रास्ते की तलाश की है। इनसे प्रभावित समाज को कई समस्याओं के साथ मुठभेड करना पड रहा है। शहरों में आँखों को चौका-चौध करनेवाली मॉल्स की चमक है तो दूसरी ओर गाँव में रोटी, कपडा और मकान के लिए आजीवन संघर्ष करना पड रहा है।

भूमण्डलीकरण विज्ञान के इस युग में सर्वाधिक चर्चित शब्द है। संसार को एक करने की इसकी दृष्टि पूरी तरह एक आयामी है। यह सिर्फ व्यापार के लिए दुनिया को एक करना चाहती है। आज की समकालीन कहानी भूमंडलीकृत समय की जटिलताओं को उभारनेवाली कहानी है। यह एक ओर इस समय के यथार्थ को खोलती है तो दूसरी ओर इस यथार्थ से मूठभेड करते मनुष्य की दर्शाती है। साथ ही साथ वह इस समय के यथार्थ को पुर्नरचित भी करती चलती है। कहानी के क्षेत्र में यह एक नया कदम है।

## 1.10 सांप्रदायिकता एवं समकालीन कहानी

सांप्रदायिकता की समस्या भारत की वर्तमान गंभीर समस्याओं में एक है। सांप्रदायिकता के पीछे मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कारिक आधार है। दर्ग, नफरत, संकीर्णता, एकांगीपन आदि सांप्रदायिकता के अन्य तत्व हैं। भारत में प्रत्येक धर्म अपने को श्रेष्ठ मानता है और पराए को हीन। धर्म निरपेक्षता की आड में धर्म सापेक्षता का कार्य कानून न चलते इस देश में बौद्धिक एवं व्यावहारिक दृष्टि की उम्मीद रखना व्यर्थ है। सांप्रदायिकता के पीछे मनोवैज्ञानिक एवं सांस्कारिक आधार है। दर्ग, नफरत, संकीर्णता, एकागीपन, आदि सांप्रदायिकता के अन्य तत्व हैं।

### 1.10.1 सांप्रदायिकता के स्त्रोत की अभिव्यक्ति

समकालीन कहानी में सांप्रदायिकता के स्त्रोतों को रेखांकित करने का प्रयास सशक्त ढंग से हो रहा है। आजकल भारतीय जीवन से आदर्श गायब होने लगा और उसके स्थान पर सुविधा जमने लगी। कृष्णा सोबती की 'सिक्का बदल गया', राजेन्द्र जोशी की 'दूसरा कबीर', स्वयं प्रकाश की 'पार्टीशन' कहानियों में सुविधा के पीछे पडे मनुष्य स्वार्थ की पूर्ति के लिए परिवेश में सांप्रदायिक जहर घुलाने लगे। राजनैतिक, धार्मिक, स्वार्थी के पैर पर पीर रखकर साधारण मनुष्य आगे बढने लगे हैं। सांप्रदायिकता और उसकी राजनीति में जो बदलाव आ गया उसका प्रतिफलन समकालीन कहानी का मुख्य मुद्दा है। मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक' कहानी में तत्कालीन जोश और स्वार्थ के कारण अपने मित्र तथा उसके परिवार को खत्म कर देनेवाला नायक का चित्रण हुआ है। मोहन राकेश की 'क्लेम', बदी उज्जमी की 'अन्तिम इच्छा', 'परदेशी', भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया है', उपेन्द्रनाथ अश्क की 'चारा काटने की मशीन', महीप सिंह की 'पानी और पल' अमरकान्त की 'मौत का नगर', शिवानी की 'लाल हवेली'

आदि कहानियों में सांप्रदायिक दंगे और परिवेशगत आतंक के छूटते ही तब तक दबी मानवता प्रस्फुटित दिखाई पडती है।

### 1.10.2 विभाजन का चित्रण

विभाजन की त्रासदी और उसकी विभीषिकाओं से गुजरे मनुष्य का चित्रण समकालीन कहानी में हुआ। अविश्वास की ओर धकेले गये मनुष्य मानसिक खोखलेपन, अराजकता एवं सुनेपन के अलावा दिन रात आतंक के साये में दिन बिताने को मज़बूर होते हैं। पार्टीशन नामक कहानी के ज़रिए अपनी मिट्टी से पराये होने की अवस्था का चित्रण किया गया है।

### 1.10.3 शिक्षा के क्षेत्र में सांप्रदायिकता

सांप्रदायिकता का वैरस शिक्षा के क्षेत्र में हमला करने लगा है। स्वयं प्रकाश की कहानी 'रेशीद का पायजाबा' कहानी में सांप्रदायिकता को विकृत रूप बनानेवाले स्वार्थ एवं ईर्ष्या का चित्रण किया है। छात्र-छात्राओं और शिक्षकों के बीच इस जहर का फैल जाना मानवता और देश के लिए खतरनाक ही है। अब्दुल बिस्मिल्लाह की 'अधर्मयुद्ध' नामक कहानी में शिक्षा के क्षेत्र के अन्तर्विरोधों को बेनकाब करती है। कॉलेज में अध्यापक की नौकरी के समय इण्टरव्यू केवल बहाना मात्र होने पर भी प्रश्नकर्ता का प्रश्न यही रहा था कि मुसलमान होकर हिन्दी क्यों सीखी? यहाँ लेखक एक ओर धर्म व संप्रदाय के ऊपर की सांप्रदायिक राजनीति और दूसरी ओर हिन्दु संस्कृति पर आधारित हिन्दी साहित्य सिखानेवाले मुसलमान अध्यापक की धर्मनिरपेक्ष दृष्टि और यह न पचनेवाली सांप्रदायिक दृष्टि को प्रस्तुत करते हैं। असगर वजाहत की 'जख्मे', 'मुक्ति', 'पहचान' सारी तालीमात, 'गुरु चेला संवाद' जैसी कहानियाँ सांप्रदायिक राजनीति उसके स्रोत, उसके असली चेहरे उसके अन्तर्विरोध इत्यादि पर चर्चा करती हैं।

### 1.10.4 सांप्रदायिक दंगे और कर्फ्यू की अभिव्यक्ति

वर्तमान समाज में सांप्रदायिक दंगे मौसमों की तरह सहज हो गए है साथ कर्फ्यू भी। देश में संसद के अधिवेशन, मंत्रियों की विदेश यात्रा, उद्घाटन व शिलान्यास उद्योग-धन्धे सब बिना रोक-टोक चलते रहते हैं। दंगे का असर किसी पर नहीं पडता है। मरनेवालों की संख्या को बढ़ने पर अखबारों में मोटे अक्षरों में खबर छपती है, नहीं तो हाशिये पर। किसी को भी इसकी परवाह नहीं। मनुष्य संवेदनहीन हो गए है, उसमें प्रतिक्रियाएँ नहीं होती है। सांप्रदायिक दंगे तथा कर्फ्यू के साथ भी वे समझौता करते हैं। दंगे की भीषणता, भयावहता, अमानवीयता, परिणति, भविष्य आदि से लोग परेशान नहीं। ये सब अब समाज के अंग हो गए है। धर्म, संप्रदाय, राजनीति इत्यादि से परे निम्मन वर्ग ही दंगे की ओर उसकी राजनीति की शिकार होती है। यह एक सच्चाई है। नमिता सिंह के 'पार्सनल मामला' नामक कहानी में इस तरह के दंगे तथा कर्फ्यू का चित्रण हुआ है।

### 1.10.5 समकालीन कहानी और धर्मनिरपेक्षता

धर्म व संप्रदाय पारिवारिक जीवन तथा स्त्री पर भी दखलन्दाजी करते हैं। नासिराशर्मा, नमिता सिंह आदि की कहानियाँ इसी पर फोकस करती है। इन्सानी नस्ल के द्वारा नासिरा शर्मा अन्त धर्मों एवं अन्तःजातीय विवाह और उनके भविष्य पर अच्चादित संदिग्धता को अभिव्यक्त करती है। 'बदली', 'तुम हो सादिया' नमिता सिंह की कहानी है। इसमें धर्म से भारतीय या आत्मीय संबन्ध और पाश्चात्य सेकुलर दृष्टि को एक साथ रखकर यहाँ की धर्म निरपेक्षता को खोल देती है।

समकालीन भारतीय समाज, धर्म, जाति, उपजाति नस्ल जैसे संकीर्ण खानों में बाँटता जा रहा है। इन खान को मिटाने की कोशिश हम सालों से कर रहे हैं, परन्तु उससे हज़ारों गुनी शक्ति से समाज खानों में बाँटता ही रहता है। इसके प्रत्यक्ष उत्तरदायी हमारे

राजनीतिक एवं धार्मिक नेताओं की स्वार्थता और तंग दृष्टि ही है। इससे प्रभावित होकर आम आदमी आजकल उसी मर्ग पर चलने लगा है। वह तो गंभीर बात है। देश के धार्मिक, राजनीतिक नेता इस खतरनाक नीति की उपेक्षा करने को तैयार नहीं है। इसी तरह के गंभीर संप्रदायिक समस्याओं को उकेरने का प्रयास समकालीन कहानीकारकरते रहे हैं।

## 1.11 नारी विमर्श

आधुनिक युग ने जहाँ स्त्री के व्यक्ति स्वातंत्र्य को उभारा है, वहीं उसके जीवन में असंख्य महिलाओं को शामिल भी किया है। वह आज भी अपनी दयनीय स्थिति से उबर नहीं पायी है। उसका आंतरिक द्वंद्व एवं विद्रोह दोनों उसकी वाणी के बुलंद करते दिखायी देते हैं। आज विश्वस्तर पर स्त्री विमर्श साहित्य का प्राणतत्व बन गया है। समकालीन कथा साहित्य में नारी जीवन संघर्ष, रोमांस, स्त्री-पुरुष, संबन्धों में बदलाव आदि को लेकर कई रचनाएँ लिखी गयी है।

स्त्री विमर्श : एक आधुनिक विमर्श है। वह पुरुष समाज के वर्चस्व के बरकत नारी अस्मिता, नारी जीवन और व्यक्तित्व निर्मिति के दायरों की चर्चा करता है। स्त्री-पुरुष संबन्धों में समयानुरूप आज बदलाव आये हैं। आज का युग महिला सशक्तिकरण का युग है। शिक्षा, रोजगार, वैश्विक विकास और महिला सशक्तिकरण ने नारी को नये बदलाव एवं रूप प्रदान किये है। मृणाल पांडे लिखती है - "स्त्री के अस्तित्व को इसके पुरुष से जुडे संबन्धों तक ही सीमित करके न देखा जाए बल्कि पुरुष की ही तरह उसे भी मानवता का एक भिन्न तथा अनिवार्य और पुरूक तत्व माना जाए।"[1]

---

1. स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक - मृणाल पांडे - पृ. 21

स्त्री विमर्श की लडाई आधि दुनिया को मनुष्य का दर्जा दिलाने की लड़ाई है। उसके मनुष्यत्व को स्वीकारना आज मानवता का सबसे बडा सवाल है। आज भी मानव की अवधारणा में स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से शामिल नहीं किया जाता। जान बूझकर स्त्री को इससे अलगाने की स्थिति खत्म नहीं हुई है। वस्तुतः जब तक स्त्री स्वयं विचार-विश्लेषण नहीं करेगी तब तक पुरुष द्वारा प्रस्थापित व्यवस्था के अनुसार ही जीवन बिताना पडेगा। अगर उसे मनुष्य श्रेणी में दाखिल होना है तो स्वयं ही उसे परंपरागत खोखली रूढिवादिता के सम्मोहक जाल को तोड़ना होगा। आज स्त्रियों ने अपनी बरसों की खामोशी को तोड़ा तथा प्रश्नाकुलता के साथ अपनी चुपी को वाणी दी है। राकेश कुमार के अनुसार "स्त्रीत्व की स्थिति चेतना को पारिभाषित करना आज बहुत जरूरी हो गया है। लिंग भेद ने स्त्री को अस्तित्वहीन, वाणीहीन, करके उसकी अस्मिता को रौदा है। पैतृक अनुशासन के नियमों द्वारा उसके बढ़ते कदमों को रोका गया है। दुनिया की हर बडी भयानक घटना हमारे स्मृति पटल को संवेदित कर सकती है तो स्त्रियों की अश्रुगाथा हमें संवेदित, उत्तेजित, क्यों नहीं करती? क्या यह आधी दुनिया की आबादी के उत्पीड़न एवं मुक्ति का प्रश्न नहीं है?"[1]

स्त्री विमर्श ने हज़ारों वर्षों से चल रहे पितृ-सत्तात्मक विमर्श, सिद्धांतों, प्रतिमानों को चुनौती दे दी है, क्योंकि वे सिद्धांत पुरुष द्वारा निर्मित है। स्त्री विमर्श ने ही पितृसत्तात्मक सिद्धांतों में निहित उन प्रचंड अंतर्विरोधों विरोधाभासों को सामने रखा है जो स्त्री विरोधी है। पुरुष कभी भी स्त्री विमर्श को खुले मन से स्वीकृति नहीं देता। महाश्वेता देवी, सुनीता भट्टाचार्य, रमणिका गुप्ता, मल्लिका सेनगुप्त आदि स्त्री लेखिकाओं ने पैतृक सिद्धांतों में निहित विरोधाभासों को तोड़ते हुए स्त्री विमर्श को प्रासंगिक बनाया है। कुछ महिलाओं ने व्यक्तिगत रूप में आवाज़ उठाई कुछ आंदोलन भी हुए, किंतु पुरुष

---

1. नारीवाद विमर्श - राकेश कुमार - पृ. 67

ने औरत का सब कुछ अपने हाथ में रखा। इस तरह पुरुष ने स्त्री पर अपनी प्रभुता कायम कर ली है। वह पुरुष के अधीन बन गई है। स्त्री को गुलाम बनाने के लिए पुरुष ने ऐसे नियम, कानून, सिद्धांत बनाए, जिसका अतिक्रमण वह आज तक नहीं कर पा रही है। लेखिका प्रभा खेतान का मानना था कि "भूमंडलीकरण ने स्त्री को जितना लाभ पहुँचाया है, उससे अधिक हानि पहुँचाई है। उसने स्त्री को सब कहीं एक आकर्षक उत्पाद में बदला है। भारत जैसे समाज में स्त्री की आर्थिक स्वतंत्रता ही काफी नहीं है, आर्थिक परिवर्तन के संदर्भ में उसे राजनीतिक और सामाजिक आंदोलन की जरूरत है। अमानवीय विकास के प्रतिमानों को खारिज करना और जनोन्मुख नजरिए को विकसित करना नारिवाद की पहला उद्देश्य होना चाहिए।"[1]

स्त्री विमर्श के सबसे पेचीदा जटिल और अक्रामक विमर्श है स्त्री पुरुष संबन्ध। सदियों से मुग्धावस्था और संभ्रम को आज स्त्रियों ने पहचाना है। औरत के लिए सबसे मुश्किल यह है कि सामाजिक प्लेटफार्म पर वैचारिक भूमिका में जो विपरीत लिंग उसे केवल पुरुष होता है। हिन्दी की प्रायः सभी लेखिकाएँ मध्यवर्गीय परिवारों से संबद्ध है। इसलिए इन्होंने अपनी कहानियों में प्रधानता मध्यवर्गीय स्त्री पात्रों की समस्यायें चित्रित की। स्त्री की स्वतंत्र अस्मिता का प्रश्न उठानेवाली कहानियाँ, सामाजिक, नैतिक, धार्मिक वर्जनाओं के खिलाफ विद्रोही तेवर अख्तियार करती हुई कहानियाँ, परिवार, विवाह जैसी संस्थाओं में घुटती-पिसती शिकार होनेवाली स्त्रीकी कहानियाँ इस समकालीन युग में काफी चर्चित रही। राजेन्द्र यादव ने इस नयी नारी का स्वरूप स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि "स्वतंत्र नारी विवाहिता या अविवाहिता पहले की तरह पति या परिवार पर निर्भर प्रेमी या पति की इच्छाओं पर नाचती, दया और सम्मान चाहती, अभाग्नि या दासी नहीं बराबरी की प्रतीक्षा और माँग करती रूढ़ि-मुक्त नारी है क्योंकि पुरुष के साथ उसका संबन्ध आज सच्चे अर्थों में मुक्त और स्वतंत्र है।"[2]

---

1. उपनिवेश में स्त्री - प्रभा खेतान - पृ. 35
2. कहानी आंदोलन की भूमिका - डॉ. बलराज पाण्डेय - पृ. 57

इस समकालीन युग में चाहे वह भारतीय नारीवादी चिंतन हो या पश्चिमी नारीवादी चिंतन दुनिया के किसी भी देश में स्त्रियाँ पुरुषों के समकक्ष नहीं रही। पुरुषोचित नज़रिया बराबर उन्हें कमतर करके ही देखने का अभ्यस्त रहा।

स्त्री विमर्श को लेकर प्रायः यह सवाल उठाया जाता रहा है कि उसके केन्द्र में महानगरों और शिक्षित मध्यवर्ग या उच्च मध्यवर्ग की ही स्त्रियों के जीवन संदर्भ है। जब कि स्त्री का संसार हमारे समाज की आधी आबादीवाला संसार है और उस संसार में गाँव की, कस्बों की, छोटे-छोटे शहरों की स्त्रियाँ भी है जो मज़बूरन पूरी जिन्दगी अपने घर-परिवारों की सीमित आँगन में रहती है। चाहने पर भी उसके चौखटों से बाहर नहीं आ पाती। अगर आने की हिम्मत भी करती है तो मर्यादाओं के नाम पर कुचल दी जाती है।

स्त्री और पुरुष समाज की दो महत्वपूर्ण इकाइयाँ है। एक की भी गति बाधित हुई तो समाज की उन्नति संभव नहीं है। इस सत्य को आज स्वीकारने लगा है। हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के कहा था "कोई भी सामाजिक व्यवस्था जो समय के साथ न बदले वह स्वयं तो डूबती ही है, उसे भी ले डूबती है जिसके लिए वह बनी है। किसी भी देश में सार्थक बदलाव की क्रान्ति तभी सफल हो सकती है जब उसमें महिलाओं का महत्वपूर्ण योगदान शामिल हो।"[1]

### 1.11.1 स्त्री विमर्श की कहानियाँ

स्त्री विमर्श से संबन्धित कई कहानीकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। मन्नू भण्डारी 'ऊँचाई' कहानी के माध्यम से स्त्री के विवाहेतर संबन्ध को सहज मानने का, विवाहित नारी का नैतिक बोध प्रस्तुत करती है।

---

1. आधुनिक एवं हिन्दी कथा साहित्य में - डॉ. मुदिता चन्द्रा - पृ. 226

विवाहेतर संबन्ध रखकर अगर पुरुष अपवित्र और अनैतिक नहीं होता तो स्त्री कैसे होती है। पवित्रता का संबन्ध शरीर से नहीं मन से होता है।

उषा प्रियंवदा की 'प्रतिध्वनियाँ' कहानी में नायिका 'वसु' अत्याधुनिक नारी है। वह अपने व्यक्तित्व को पूर्णतः पति के व्यक्तित्व में विलीन नहीं करना चाहती है। वह अपनी पृथक सत्ता रखती हुई अपनी मर्जों की जिन्दगी जीना चाहती है। वसु जब पढ़ाई के लिए विदेश जाती है, वहाँ उसके संपर्क में कई पुरुष आते हैं। उसका प्रारंभिक जीवन दूसरों द्वारा चुना हुआ था, अब वह अपनी इच्छानुसार जी रही है।

उषा महाजन ने 'एक और श्रवणकुमार' कहानी में एक ऐसी माँ का चित्रण किया है, जिसे वृद्धावस्था में सहारा नहीं मिलता। तीन बेटों की माँ होते हुए भी उसे बेटी के यहाँ आश्रय लेना पडता है। बेटों के परिवार में माँ की कोई जरूरत नहीं है। छोटा बेटा अपने बेटे की देखभाल के लिए आया न मिले तो स्वार्थ हेतु अपने माँ को ले जाते हैं। जब माँ को पता चला तो वह आक्रोश में चीखती है कि "जो आया ही बन के रहना पडेगा तब मैं तो तेरे नहीं पडोसियों के घर करूँगी आया का काम। इज्जत तो देंगे वे मुझे।"[1] उसकी यह स्व-निर्णय की क्षमता उसके स्वाभिमानी व्यक्तित्व को ही उजागर करती है।

सूर्यबाला की कहानियाँ मध्यवर्गीय समाज के परिचित यथार्थ को सादगी और विश्वसनीयता के साथ अंकित करते हैं। उनकी कहानियों में कही-कही व्यंग्य की अन्तर्धारा दिखाई देती है। उनकी कहानी 'थाली भर चाँद' वास्तविक श्रम और सोशल वर्ग के दृश्य को अंकित करते हैं। उनकी कहानियाँ हमारे सामाजिक अंतर्विरोध की गहरी पहचान का आभास देती है।

---

1. शोषित और अन्य कहानियाँ ओर श्रवणकुमार - उषा महाजन - पृ. 59

नमिता सिंह द्वारा लिखित 'दर्द' कहानी की नायिका सुन्नरी निम्मन वर्ग के होते हुए भी अपने अस्तित्व के प्रति सजग है। वह ऐसी दुनिया में जीना चाहती है जहाँ प्रेम है, आदर है। वह स्वयं चुने गये व्यक्ति के साथ जीवन निर्वाह करना उचित समझती है।

मालती जोशी द्वारा लिखित 'स्वयंवर' कहानी की नायिका प्रभा जीवन भर अपने परिवार के लिए त्याग करती है। अपनी खुशियों का गला घोट कर अपने भाई बहनों की जिन्दगी सँवारती है। अंत में भाई बहन की शादी का मार्ग खुला छोडने के लिए वह अपंग गोपालदास से रिश्ता जोड लेती है। उसका यह फैसला भले ही परिवार के त्याग करने की मानसिक विवशता हो, लेकिन स्वयं अपने विवाह का निर्णय लेना प्रभा का परंपरागत मान्यताओं को तोडना ही माना जायेगा।

मंजुल भगत की 'निशा' कहानी नायिका निशा अपने व्यक्तित्व विकास के लिए आत्मनिर्भर होना अधिक पसंद करती है, इसलिए शिक्षा को अधिक महत्व देती है। ममता कालिया की कहानी 'छुटकारा', 'काली साड़ी' आदि कहानियों में पूरे मध्यवर्ग की स्त्री को अपने केंद्र में रखकर सामाजिक संरचना में स्त्री की स्थिति को परिभाषित करती दिखाई देती है।

मृणाल पांडे द्वारा लिखित 'यानि कि एक बात थी' कहानी में नायिका एक ऐसी स्त्री का चित्रण करती है जो 35 वर्ष की प्रौढ़ प्राध्यापिका है। पति के अहंकार के कारण वह उससे अलग हो जाती है, क्योंकि पुरुष केवल स्त्री के शरीर तक ही सीमित होता है। उसके आंतरिक भाव जानने की कोशिश नहीं करता। आज की स्त्री को यह मंजूर नहीं। इसलिए जब वह उसे पुनः रिश्ता जोड़ने की बात करता है तो उसे वह स्वीकार नहीं होता।

चित्रा मुद्गल की 'इस हमाम में' कचारा उठानेवाली अंजा और कहानी की नायिका दोनों ही अपने आपको समान जीवन स्तर पर जीता हुआ पाती है। घटना एवं

परिवेश को छोडा जाए तो दोनों के दर्द एक जैसा है। इस कहानी की नायिका पुरुष द्वारा बनाये गये एवं जडे गये फ्रेम से बाहर आने की कोशिश करती है।

सुदा अरोडा की कहानी आधी आबादी में लेखिका आधी आबादी अर्थात स्त्री के पाँव में पडी अदृश्य बेडियों और अपने वजूद का भुलाते हुए अपने अस्तित्व को तलाशती पचास वर्षीय औरत की गाथा को वाणी दी है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने कहानियों में गाँव की औरतों की अस्मिता के विकास में कई चरित्र खडे कर दिए हैं। 'सीता', 'मौसी', 'प्यारी', चंपा और ललिता जैसी जुझारु दलित आदिवासी मज़दूर स्त्रियाँ भीहै जो अस्मिता के लिए संघर्ष करती है। मैत्रेयी पुष्पा की कहानी उस ग्रामीण समाज से उपजा है जो सामंती भवभूमि पर पुरुष वर्चस्व की अवधारणाओं के बीच आज जी रहा है।

हरेक कहानीकार ने अपने ढंग से स्त्री विमर्श से संबन्धित विषयों को अपनी कहानियों में माध्यम से चित्रित करने की कोशिश की है। लेकिन नासिरा शर्मा की कहानियाँ इन रचनाकारों की कहानियों से भिन्न है। नासिराजी के जीवन अनुभव तथा परिवेश भिन्न होने के कारण उनकी कहानियों का मिज़ाज भी भिन्न प्रतीत होता है। नासिरा शर्मा के जीवन का अधिकांश हिस्सा शहरों में बीता है। उनकी सारी रचनाएँ इनसान की तकलीकों की साक्षी बनती है। उनकी रचना में विश्वास की भरपूर चमक है नासिराजी ने अपनी कहानियों में मध्यवर्गीय महिला तथा पुरुषों पर भी लिखी है। वस्तुतः नासिरा शर्मा की कहानियाँ जीवन के प्रति आस्था बनाए रखने का प्रयास है तथा उनकी कहानियों में स्त्री विमर्शवादियों की तरह कोरा स्त्री विमर्श नहीं है। इनकी कहानियाँ इंसानियत के पक्ष में खडी होकर बेआवाज़ को भी आवाज़ दे रही है।

## निष्कर्ष

विगत पच्चीस वर्षों में हिन्दी कहानी साहित्य रूप की दृष्टि से स्वयं बहुत आधुनिक है। वह नवीनता के साथ उत्पन्न हुई थी, इसलिए सौ पचास वर्षों के इस छोटे से इतिहास में किसी मौलिक परिवर्तन की न तो संभावना है, न आवश्यकता है। आधुनिक युग का एक वरदान है कि विश्व के विभिन्न देश और उनकी रचनायें बहुत काफी निकट आ गयी है।

जब कहानी कही जाती थी, तब उसका मुख्य प्रयोजन मनोरंजन था। जब कहानी लिखी जाने लगी, वह श्रव्य न रहकर पाठ्य हो गयी। तब उसका मुख्य प्रयोजन आत्माभिव्यक्ति और जीवन की आलोचना हो गया। मनोरंजन उसके साथ गैण रूप से लगा रहा। आधुनिक काल में कहानी सार्थक और महत्वपूर्ण मानी गयी और कहानीकार आत्माभिव्यक्ति के साथ जीवन की गंभीर आलोचना करता रहा। आज समसामाजिक कहानी इस लक्ष्य को सजगता पूर्वक निभा रहा है। आज की कहानियों को देखते हुए निसंदेह कहा जा सकता है कि कहानी में सामाजिक शक्ति अधिक है, और सामाजिक परिवर्तन के लिए वह साहित्य शास्त्र का काम कर रही है। अर्थात् घटना प्रसंग जितना वास्तविक होगा कहानी उतनी ही ज़ोरदार होगी। हिन्दी कहानी की एक बहुत बडी खूबी तत्कालीनता है। वह अपने समय की गंभीर विमर्श प्रस्तुत करती है। नई कहानी दौर के साथ ही हिन्दी कहानी एक ललित विधा से गंभीर रोच की विधा में रूपान्तरित होती चली गयी।

इस प्रकार आज कहानी ने नाना प्रकार के मानवीय संबन्धों का चित्रण किया है। उसमें अपने समय के गंभीर सामाजिक यथार्थ और मानव की आन्तरिक सच्चाई को हमें अनुभूत कराने का सृजनात्मक दायित्व भी निभाया। देश की सामाजिक व्यवस्था, व्यक्ति की सत्ता उसके व्यक्तित्व की पहचान और सर्वोपरी साँस्कृतिक परंपरा का दर्शन कराकर समकालीन कहानीकारों ने अपनी रचना धर्मिता का भी परिचय दिया।